॥ श्रीहरिः ॥ 185

भक्तराज हनुमान

(आदर्श चरितमाला प्रथमपुष्प)

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

प्रथम संस्करणका निवेदन

बहुत दिनोंसे विचार था कि प्राचीन कालके कुछ आदर्श पुरुषोंकी जीवनियाँ और उनके उपदेश संक्षेपमें निकाले जायँ। परन्तु इसकी कोई व्यवस्था नहीं हो सकी थी। अब पं० श्रीशान्तनुविहारीजी द्विवेदीने कृपापूर्वक इस कामको स्वीकार कर लिया और उसीके फलस्वरूप यह 'आदर्श चरितमाला' का प्रथम पुष्प 'भक्तराज हनुमान्' आपके हाथोंमें है। इसमेंकी अधिकांश बातें तो वाल्मीकीय रामायण, अध्यात्मरामायण, रामचरितमानस, पद्मपुराण और ब्रह्माण्डपुराण आदि ग्रन्थोंसे ली गयी हैं। कुछ बातें परम्परासे सुनी हुई हैं। सम्भव है, वे भी किसी ग्रन्थमें हों। आशा है, पाठक भक्तप्रवर श्रीहनुमान्‌जीके पवित्र पुण्य-जीवनको पढ़कर प्रसन्न होंगे।

सम्पादक—

हनुमानप्रसाद पोद्दार

❑❑

॥ श्रीहरि:शरणम् ॥

भक्तराज हनुमान्

(१)

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यानघन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर॥

भगवान् शंकर भगवती सतीके साथ कैलासके एक उत्तम शृंगपर विराजमान थे। वटकी घनी छायामें उनके कपूरके समान धवल शरीरपर भूरे रंगकी जटाएँ बिखरी हुई थीं। हाथमें रुद्राक्षकी माला, गलेमें साँप और सामने ही नन्दी बैठा हुआ था। उनके सहचर-अनुचर वहाँसे कुछ दूर परस्पर अनेकों प्रकारकी क्रीड़ाएँ कर रहे थे। उनके सिरपर चन्द्रमा और गंगाकी अमृतमयी धारा रहनेके कारण तीसरे नेत्रकी विषम ज्वाला शान्त थी। ललाटका भस्म बड़ा ही सुहावना मालूम पड़ता था।

एकाएक 'राम-राम' कहते हुए उन्होंने अपनी समाधि भंग की। सतीने देखा कि भगवान् शंकर एक अपूर्व भावसे उनकी ओर देख रहे हैं। वे सामने खड़ी हो गयीं और हाथ जोड़कर विनयके साथ कहने लगीं—'स्वामिन्! इस समय मैं आपकी क्या सेवा करूँ? क्या आप कुछ कहना चाहते हैं? आपकी मुखाकृतिसे तो ऐसा ही प्रकट हो रहा है।' भगवान् शंकरने कहा—'प्रिये! आज मेरे मनमें एक बड़ा ही शुभ संकल्प उठ रहा है। मैं सोच रहा हूँ कि जिनका मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ, जिनके नामोंको रट-रट कर गद्‌गद होता रहता हूँ, जिनके वास्तविक स्वरूपका स्मरण करके मैं समाधिस्थ हो जाता हूँ, वे ही मेरे भगवान्, वे ही मेरे प्रभु अवतार ग्रहण करके संसारमें आ रहे हैं। सभी देवता उनके साथ अवतार लेकर उनकी सेवाका सुयोग प्राप्त करना चाहते हैं, तब मैं ही क्यों वंचित रहूँ? मैं भी वहीं चलूँ और उनकी सेवा करके अपनी युग-युगकी लालसा पूर्ण करूँ, अपने जीवनको सफल बनाऊँ।'

भगवान् शंकरकी यह बात सुनकर सती सहसा यह न सोच सकीं कि

इस समय क्या उचित है और क्या अनुचित। उनके मनमें दो तरहके भाव उठ रहे थे। एक तो यह कि मेरे पतिदेवकी अभिलाषा पूर्ण होनी चाहिये और दूसरा यह कि मुझसे उनका वियोग न हो। उन्होंने कुछ सोचकर कहा 'प्रभो! आपका संकल्प बड़ा ही सुन्दर है, जैसे मैं अपने इष्टदेवकी—आपकी सेवा करना चाहती हूँ, वैसे ही आप भी अपने इष्टदेवकी सेवा करना चाहते हैं। परंतु वियोगके भयसे मेरा हृदय न जाने कैसा हुआ जा रहा है। आप कृपा करके मुझे ऐसी शक्ति दें कि मेरा हृदय आपके ही सुखमें सुख मानने लगे। एक बात और है, भगवान्‌का अवतार इस बार रावणको मारनेके लिये हो रहा है, वह आपका बड़ा भक्त है, उसने अपने सिरतक काटकर आपको चढ़ाये हैं। ऐसी स्थितिमें आप उसको मारनेके काममें कैसे सहायता कर सकते हैं?'

भगवान् शंकर हँसने लगे। उन्होंने कहा—'देवि! तुम बड़ी भोली हो। इसमें वियोगकी तो कोई बात ही नहीं है। मैं एक रूपसे अवतीर्ण होकर उनकी सेवा करूँगा और एक रूपसे तुम्हारे साथ रहकर तुम्हें उनकी लीलाएँ दिखाऊँगा तथा समय-समयपर उनके पास जाकर उनकी स्तुति-प्रार्थना करूँगा। रह गयी तुम्हारी दूसरी बात, सो तो जैसे रावणने मेरी भक्ति की है, वैसे ही उसने मेरे एक अंशकी अवहेलना भी की है। तुम तो जानती ही हो, मैं ग्यारह स्वरूपोंमें रहता हूँ। जब उसने अपने दस सिर चढ़ाकर मेरी पूजा की थी, तब उसने मेरे एक अंशको बिना पूजा किये ही छोड़ दिया था। अब मैं उसी अंशके रूपमें उसके विरुद्ध युद्ध कर सकता हूँ और अपने प्रभुकी सेवा भी कर सकता हूँ। मैंने वायु देवताके द्वारा अंजनाके गर्भसे अवतार लेनेका निश्चय किया है। अब तो तुम्हारे मनमें कोई दुःख नहीं है न; भगवती सती प्रसन्न हो गयीं।'

देवराज इन्द्रकी अमरावतीमें एक पुंजिकस्थला नामकी अप्सरा थी। एक दिन उससे कुछ अपराध बन गया, जिसके कारण उसे वानरी होकर पृथ्वीपर जन्म लेना पड़ा। शाप देनेवाले ऋषिने बड़ी प्रार्थनाके बाद इतना अनुग्रह कर दिया था कि वह जब जैसा चाहे, वैसा रूप धारण कर ले। चाहे जब वानरी रहे, चाहे जब मानवी। वानरराज केसरीने उसे पत्नीके रूपमें ग्रहण किया था। वह बड़ी सुन्दरी थी और केसरी उससे बहुत ही प्रेम करते थे।

एक दिन दोनों ही मनुष्यका रूप धारण करके अपने राज्यमें, सुमेरुके श्रृंगोंपर विचरण कर रहे थे। मन्द-मन्द वायु बह रहा था। वायुके एक हलकेसे झोंकेसे अंजनाकी साड़ीका पल्ला उड़ गया। अंजनाको ऐसा मालूम हुआ कि मुझे कोई स्पर्श कर रहा है। वह अपने कपड़ेको सँभालती हुई अलग खड़ी हो गयी। उसने डाँटते हुए कहा—'ऐसा ढीठ कौन है, जो मेरा पातिव्रत्य नष्ट करना चाहता है। मेरे इष्टदेव—पतिदेव मेरे सामने विद्यमान हैं और कोई मेरा व्रत नष्ट करना चाहता है! मैं अभी शाप देकर उसे भस्म कर दूँगी।' उसे प्रतीत हुआ मानो वायुदेव कह रहे हैं—'देवि! मैंने तुम्हारा व्रत नष्ट नहीं किया है। देवि! तुम्हें एक ऐसा पुत्र होगा, जो शक्तिमें मेरे समान होगा, बल और बुद्धिमें उसकी समानता कोई न कर सकेगा। मैं उसकी रक्षा करूँगा, वह भगवान्‌का सेवक होगा।' तदनन्तर अंजना और केसरी अपने स्थानपर चले गये। भगवान् शंकरने अंशरूपसे अंजनाके कानके द्वारा उसके गर्भमें प्रवेश किया।[१]

× × × ×

चैत्र शुक्ला १५ मंगलवारके दिन[२] अंजनाके गर्भसे भगवान् शंकरने वानररूपसे अवतार ग्रहण किया। अंजना और केसरीके आनन्दकी सीमा न रही। शुक्लपक्षके चन्द्रमाके समान दिन-प्रतिदिन बढ़ते हुए बालकका लालन-पालन बड़े ही मनोयोगसे होने लगा। अंजना कहीं जाती तो उन्हें अपने हृदयसे सटा लेती, केसरी बालकको अपनी पीठपर बैठाकर छलाँगें भरते और अपने शिशुको आनन्दित देखकर स्वयं आनन्दमग्न हो जाते।

एक दिन बच्चेको घरपर छोड़कर अंजना कहीं फल-फूल लानेके लिये चली गयी। केसरी पहलेसे ही बाहर गये हुए थे। बालक घरमें

१- जेहि सरीर रति राम सों सोइ आदरहिं सुजान।
रुद्रदेह तजि नेहबस बानर भे हनुमान॥
जानि राम सेवा सरस समुझि करब अनुमान।
पुरुषा ते सेवक भए हर ते भे हनुमान॥
(दोहावली १४२-१४३)

२-किन्हीं-किन्हींके मतसे हनुमान्‌जीकी जन्मतिथि कार्तिक कृष्ण १४ या कार्तिक शुक्ला १५ है।

अकेला था और उसे भूख लगी हुई थी। उसने इधर-उधर देखा, पर उसे कोई चीज न मिली। अन्तमें उसकी दृष्टि सूर्यपर पड़ी। प्रातःकालका समय था, उसने सोचा कि यह तो बड़ा सुन्दर लाल-लाल फल है। यह खाने-खेलने दोनों ही कामोंमें आयेगा। बालकने सूर्यतक पहुँचनेकी चेष्टा की। वायुने पहले ही उसे उड़नेकी शक्ति दे दी थी अथवा यों भी कह सकते हैं कि भगवान् शंकरकी लीलामें यह आश्चर्यकी कौन-सी बात है।

वह बालक आकाशमें उड़ने लगा। देवता, दानव, यक्ष आदि उसे देखकर विस्मित हो गये। वायुके मनमें भी शंका हुई। उन्होंने सोचा कि मेरा यह नन्हा-सा बालक सूर्यकी ओर दौड़ा जा रहा है। मध्याह्नकालके तरुण सूर्यकी प्रखर किरणोंसे कहीं यह जल न जाय! उन्होंने हिमालय और मलयाचलसे शीतलता इकट्ठी की और अपने पुत्रके पीछे-पीछे चलने लगे। सूर्यने भी देखा। उनकी दिव्य दृष्टिमें बालककी महत्ता छिपी न रही। उनके मनमें कई बातें आयीं। उन्होंने देखा कि स्वयं भगवान् शंकर ही वानर-बालकके वेशमें मेरे पास आ रहे हैं। यह बात भी उनसे छिपी न रही कि मेरे पितृतुल्य वायुदेवके आशीर्वादसे ही इस बालकका जन्म हुआ है और वे स्वयं इसकी रक्षा करनेके लिये आ रहे हैं। उन्होंने अपनी कर-किरणें शीतल कर दीं, मानो वे अपने कोमल करोंसे स्पर्श करके अपने छोटे भाईको दुलारने लगे अथवा जगत्पिता शंकरको अपने पास आते देखकर उनका स्वागत करने लगे। वह बालक सूर्यके रथपर पहुँच गया। उनके साथ खेलने लगा।

उस दिन था ग्रहण। अपना समय जानकर राहु सूर्यको ग्रसनेके लिये आया। उसने देखा कि एक वानर-बालक सूर्यके रथपर बैठा हुआ है। पहले तो राहुने कोई परवा नहीं की, पहलेकी भाँति ही सूर्यपर टूट पड़ा। परंतु जब बालकके कठोर हाथोंसे वह पकड़ लिया गया, तब वह भयभीत हो गया और किसी प्रकार अपनेको छुड़ाकर भागा। वह सीधे देवराज इन्द्रके पास गया। उसने जाकर इन्द्रसे कहा—'देवराज! आपने सूर्यको ग्रसनेका अधिकार मुझे दिया है। क्या अब आपने किसी दूसरेको भी यह अधिकार दे दिया है?' इन्द्रकी समझमें यह बात न आयी। उन्होंने राहुको डाँटकर फिर सूर्यके पास भेजा। दुबारा राहुके जानेपर बालकको

अपनी भूखकी याद आ गयी। उसने सोचा कि यह खानेकी अच्छी चीज है। बस, राहुपर टूट पड़ा। राहु उस बालकके तेजसे डर गया और अपनी रक्षाके लिये इन्द्रको पुकारने लगा। इन्द्र ऐरावतपर चढ़कर उसकी रक्षाके लिये दौड़े। ऐरावतको देखते ही बालकने राहुको छोड़ दिया और वह उसे एक अच्छा-सा फल समझकर पकड़नेके लिये दौड़ा। अब इन्द्रने डरकर अपना वज्र फेंका, जिससे बालककी बायीं हनु (ठुड्डी) टूट गयी। बालक घायल होकर पहाड़पर गिर पड़ा और छटपटाने लगा।

वायुदेव बालकको उठाकर गुफामें ले गये। उन्हें इन्द्रपर बड़ा क्रोध आया और उन्होंने अपनी गति बंद कर दी। वायुके बंद हो जानेसे सब काठ-सरीखे हो गये। त्रिलोकीमें कोई हिल-डुलतक नहीं सकता था। सबकी साँस बंद हो गयी। देवतालोग घबराये। इन्द्र दौड़े हुए ब्रह्माके पास गये। उसी क्षण ब्रह्मा पर्वतकी उस गुफामें आये और अपने हाथोंसे बालकका स्पर्श करके उसे जीवित कर दिया। बालक प्रसन्नताके साथ उठ खड़ा हुआ। वायुदेव बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने सारे जगत्‌में प्राण-संचार कर दिया। ब्रह्माने देवताओंसे कहा कि यह बालक साधारण नहीं है। यह देवताओंका कार्यसाधन करनेके लिये ही प्रकट हुआ है, इसलिये यह उचित है कि सब देवता इसको वरदान दें। इन्द्रने कहा—'मेरे वज्रके द्वारा इसकी हनु टूट गयी है, इसलिये आजसे इसका नाम हनुमान् होगा और मैं वर देता हूँ कि मेरे वज्रसे हनुमान्‌का कभी बाल भी बाँका नहीं होगा।' सूर्यने कहा—'मैं अपना शतांश तेज इसे देता हूँ। मेरी शक्तिसे यह अपना रूप बदल सकेगा और जब इसे शास्त्रका अध्ययन करनेकी इच्छा होगी तो मैं सम्पूर्ण शास्त्रोंका अध्ययन करा दूँगा। यह बड़ा भारी वाग्मी होगा।' वरुणने अपने पाशसे और जलसे निर्भय होनेका वर दिया। कुबेर आदि देवताओंने भी अपनी-अपनी ओरसे हनुमान्‌को निर्भय किया। विश्वकर्माने अपने बनाये हुए दिव्यास्त्रोंसे अवध्य होनेका वर दिया और ब्रह्माने ब्रह्मज्ञान दिया, चिरायु करनेके साथ ही ब्रह्मास्त्र और ब्रह्मपाशसे भी मुक्त कर दिया।

चलते समय ब्रह्माने वायुदेवसे कहा—'तुम्हारा पुत्र बड़ा ही वीर, इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला और मनके समान तीव्रगामी होगा। इसकी गति अप्रतिहत

होगी, इसकी कीर्ति अमर होगी और राम-रावण-युद्धमें यह रामका सहायक तथा उनका परम प्रीतिभाजन होगा।' इस प्रकार हनुमान्‌को वर देकर सब देवता अपने-अपने धामको चले गये। अंजना और केसरीको यह सब सुनकर जो सुख हुआ वह सर्वथा अनिर्वचनीय है।

× × × ×

बचपनमें हनुमान् बड़े ही नटखट थे। एक तो वानर, दूसरे बच्चे और तीसरे देवताओंसे प्राप्त इतना बल! रुद्रका अंश तो था ही, ऋषियोंके आसन उठाकर पेड़पर टाँग देते, उनके कमण्डलुका जल गिरा देते, उनकी लँगोटी फाड़ डालते। कभी-कभी किसीकी गोदमें बैठकर खेलते, एकाएक उसकी दाढ़ी नोचकर भाग खड़े होते। उन्हें कोई बलपूर्वक तो रोक सकता ही नहीं था, सब विवश थे। बड़े हुए, विद्याध्ययनका समय आ गया, परंतु इनकी चंचलता जैसी-की-तैसी बनी रही। अंजना और केसरी बड़े ही चिन्तित हुए, उनसे जो कुछ उपाय हो सकता, उन्होंने किया; परंतु हनुमान् राहपर न आये। उन्होंने ऋषियोंसे प्रार्थना की कि 'आपलोग कृपा करें, तभी यह बालक सुधर सकता है।' ऋषियोंने विचार करके यह निश्चय किया कि इसे अपने बलका बड़ा घमंड है। यदि यह अपना बल भूल जाय तो काम बन सकता है। उन्होंने हनुमान्‌को शाप दे दिया कि 'तुम अपने बलको भूल जाओ। जब कोई कभी तुम्हें तुम्हारी कीर्तिकी याद दिलावेगा, तब तुम अपने बलका स्मरण करके पुनः ऐसे ही हो जाओगे।' हनुमान् अपना बल भूल गये।

अब उनके विद्याध्ययनका समय आया। वानरराज केसरीने उचित संस्कार करके वेदाध्ययनके लिये उन्हें सूर्यके पास भेज दिया। वहाँ जाकर हनुमान्‌ने समस्त वेद-वेदांगोंका अध्ययन किया। उन्हें अध्ययन तो क्या करना था, वे साक्षात् शिव थे; तथापि सम्प्रदाय-परम्पराकी रक्षा करनेके लिये उन्होंने सम्पूर्ण विद्याओंका अध्ययन किया। थोड़े ही दिनोंमें वे अपने माता-पिताके पास लौट आये। सूर्यकी कृपासे अपने पुत्रको सर्वविद्यापारंगत देखकर माता-पिताको बड़ा आनन्द हुआ।

× × × ×

भगवान् राम अवतीर्ण हो चुके थे। भगवान् शंकर उनकी बाल-लीलाका दर्शन करनेके लिये प्रायः ही अयोध्यामें आते और अयोध्यामें ही रहते । वे किसी दिन ज्यौतिषी बनकर भगवान्का हाथ देखते तो किसी दिन भिक्षुक बनकर उन्हें आशीर्वाद देते। जब भगवान् राम खेलनेके लिये महलसे बाहर आने लगे, तब एक दिन एक मदारी आया। उसके साथ एक परम सुन्दर नाचनेवाला बंदर था। मदारी डमरू बजाता हुआ राजमहलके फाटकपर जा पहुँचा। बहुत-से लड़के इकट्ठे हो गये, भगवान् राम भी अपने भाइयोंके साथ आ गये। यह बंदर साधारण बंदर थोड़े ही था, यह तो अपने भगवान्को रिझानेके लिये ही हनुमान्रूपमें प्रकट होनेवाले स्वयं शिव थे। नाचनेवाले भी आप, नचानेवाले भी आप। यह सब किसलिये, केवल अपने प्रभुकी मधुर लीला देखनेके लिये, उनके साथ खेलनेके लिये और उनकी प्रसन्नताके लिये।

आखिर भगवान् रीझ गये। बंदरका नाच देखकर सब लोग लौटने लगे, परंतु भगवान् राम अड़ गये। उन्होंने कहा कि मैं तो यह बंदर लूँगा। राजकुमारका हठ भला कैसे टाला जाता। महाराज दशरथने आज्ञा दी कि बंदरके बदलेमें मदारी जितना धन चाहे ले ले, बंदर मेरे श्यामसुन्दरको दे जाय। मदारी धनके लिये तो आया नहीं था, वह तो आया था अपने-आपको प्रभुके चरण-कमलोंमें समर्पित करनेके लिये! भगवान् रामने अपने हाथों उस बंदरको ग्रहण किया। अबतक वे अपने-आपको स्वयं नचा रहे थे और अब नचानेवाले हुए भगवान् राम तथा नाचनेवाले हुए स्वयं वे। युग-युगकी अभिलाषा पूरी हुई, वे आनन्दातिरेकसे नाचने लगे, सब लोग उस बंदरका नाच देखनेमें तन्मय हो गये और मदारी लापता हो गया। पता नहीं, वह मदारी बंदरमें ही प्रवेश कर गया या अपना काम पूरा हो जानेपर कैलास चला गया।

इस रूपमें हनुमान् बहुत दिनोंतक भगवान् रामकी सेवा और मनोरंजन करते रहे। जब विश्वामित्र राम और लक्ष्मणको ले जानेके लिये आये, तब भगवान्ने उन्हें एकान्तमें बुलाकर समझाया! उन्होंने कहा—'हनुमान्! तुम मेरे अन्तरंग सखा हो, तुमसे मेरी कोई लीला छिपी नहीं है। आगे

चलकर मैं रावणको मारूँगा। उस समय मुझे वानरोंकी आवश्यकता होगी। रावणने बालिको मिला रखा है। खर-दूषण, त्रिशिरा, शूर्पणखा दण्डकवनमें हैं; मारीच, सुबाहु, ताड़का हमारे पड़ोसमें ही हैं, उनका जाल चारों ओर फैला है। तुम शबरीसे मिलकर ऋष्यमूक पर्वतपर जाओ और वहाँ सुग्रीवसे मित्रता करो। मैं धीरे-धीरे रास्ता साफ करता हुआ वहाँ आऊँगा, तब तुम सुग्रीवको मुझसे मिलाना और वानरी-सेना एकत्रित करना। फिर रावणको मारकर अवतार-कार्य पूरा किया जायगा।'

भगवान्‌को छोड़कर जानेकी इच्छा न होनेपर भी हनुमान्‌ने भगवान्‌की आज्ञा शिरोधार्य की और उनका नामस्मरण करते हुए उन्होंने ऋष्यमूक पर्वतके लिये प्रस्थान किया।

❑❑

(२)

उन दिनों बालिसे भयभीत होकर सुग्रीव अपने मन्त्रियोंके साथ ऋष्यमूक पर्वतपर रहते थे। हनुमान् भी उन्हींके साथ थे। सुग्रीव प्रायः डरते ही रहते थे कि कहीं बालिका भेजा हुआ कोई उसका मित्र आकर हमपर आक्रमण न कर दें; क्योंकि शापके कारण बालि स्वयं वहाँ नहीं आ सकता था। एक दिन वे मन्त्रियों और अपने प्रिय सहचर हनुमान्‌के साथ बैठकर कुछ राजनीतिक चर्चा कर रहे थे। एकाएक उनकी दृष्टि पंपासरकी ओर चली गयी। उन्होंने देखा कि वहाँ दो सशस्त्र व्यक्ति खड़े हैं। उनका उद्देश्य तो ठीक-ठीक नहीं जान पड़ता; परंतु वे किसीकी खोजमें मालूम पड़ते हैं। उनकी चाल-ढाल, उनका वीरोचित शरीर, उनके शस्त्र-अस्त्र और साथ ही उनके वल्कल वस्त्र और जटाओंको देखकर सुग्रीवको बड़ी शंका हुई। उन्होंने हनुमान्‌से कहा कि 'भाई! पता लगाओ, ये दोनों वीर पुरुष कौन हैं? यदि शत्रु-पक्षके हों तो यहाँसे भाग चलना चाहिये और यदि उदासीन हों तथा उन्हें भी किसी सहायताकी आवश्यकता हो तो उनसे मित्रता कर ली जाय और एक-दूसरेकी इष्ट-सिद्धिमें सहायक हों। तुम ब्रह्मचारीका वेष धरकर उनका पता लगाओ। फिर जैसा हो, इशारेसे मुझे सूचित कर देना।' हनुमान्‌ने उनकी आज्ञा स्वीकार की।

सुग्रीवके कहनेसे हनुमान् ब्राह्मणका वेष बनाकर उनके पास गये। उन्होंने योग्य शिष्टाचारके पश्चात् उन दोनोंकी प्रशंसा करते हुए उनका परिचय पूछा। उन्होंने कहा—'आपके शस्त्रास्त्र और शरीरका वीरोचित गठन देखकर ऐसा अनुमान होता है कि आप वीर पुरुष हैं। आपके कोमल चरणोंको देखकर जान पड़ता है कि आप राजमहलके रहनेवाले हैं। कभी जंगल अथवा पहाड़में नहीं रहना पड़ा है। आपकी वेष-भूषाको देखकर यही कहा जा सकता है कि आप ऋषिकुमार हैं; परंतु कोई बात निश्चित नहीं। आपके मुखमण्डलका तेज स्पष्ट बता रहा है कि आप साधारण पुरुष नहीं, अलौकिक हैं। क्या आप तीनों देवताओंमेंसे कोई हैं? कहीं आप साक्षात् नर-नारायण ही तो नहीं हैं? मेरे मनमें बड़ी शंका हो रही है। आपमें बड़ा आकर्षण मालूम पड़ रहा है। आपके सौन्दर्य और माधुर्यसे मेरा चित्त मुग्ध हुआ जा रहा है, आप मेरे अत्यन्त ममतास्पद जान पड़ते हैं। मैं आपके साथ कभी रहा हूँ, मेरा हृदय बार-बार यह बात कह रहा है, आप कृपा करके मेरा संदेह नष्ट करें।'

भगवान् राम मन्द-मन्द मुसकराते हुए हनुमान्की बात सुन रहे थे। उन्होंने लक्ष्मणकी ओर देखकर कहा—'ये ब्राह्मण बड़े बुद्धिमान् हैं। इनकी बातोंसे मालूम पड़ता है कि इन्होंने सांगोपांग वेदोंका अध्ययन किया है। इनके बोलनेमें एक भी अशुद्धि नहीं हुई है। इनकी आकृतिपर ऐसा कोई लक्षण नहीं प्रकट हुआ है जिससे इनका भाव दूषित कहा जा सके। ये किसी राजाके मन्त्री होनेके योग्य हैं। इनकी उच्चारणशैली और नीतिमत्ता दोनों ही गम्भीर तथा प्रभावोत्पादक हैं।' रामके इशारेसे लक्ष्मणने कहा—'ब्राह्मणदेव! हमलोग अयोध्यानरेश महाराज दशरथके पुत्र हैं। उनकी आज्ञा मानकर चौदह वर्षके लिये वनमें आये हैं। यहाँ किसी राक्षसने जनकनन्दिनी सीताका अपहरण कर लिया है। हमलोग उन्हींको ढूँढ़ते हुए इधर घूम रहे हैं। अब तुम अपना परिचय दो।'

लक्ष्मणकी बात समाप्त होते-न-होते हनुमान्का रूप बदल गया। वे वानरके रूपमें भगवान्के चरणोंपर गिर पड़े। उस समय उनका हृदय कह रहा था कि मैं भगवान्के सामने दूसरा वेष धारण करके आया, एक

प्रकारसे उनसे कपट किया, इसीसे उन्होंने मुझसे बातचीततक नहीं की। मैंने उन्हें नहीं पहचाना, इसलिये उन्होंने भी मुझे नहीं पहचाना। मैंने उनका परिचय पूछा तो उन्होंने भी मुझसे परिचय पूछा। यह सब मेरी कूटनीतिका फल है। मैं अपराधी हूँ, यह सोचते-सोचते उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी, वे भगवान्‌के चरणोंसे लोटने लगे। भगवान्‌ने उन्हें बलात् उठाकर हृदयसे लगाया।

हनुमान्‌ने कहा—'प्रभो! मैं पशु हूँ। साधारण जीव हूँ। मैं आपको भूल जाऊँ, मैं तो आपके सामने अपराध करूँ, यह स्वाभाविक है। परंतु आप मुझे कैसे भूल गये? मैं तो आपकी आज्ञासे सुग्रीवके पास रहकर बहुत दिनोंसे आपकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। सुग्रीव भी बड़े दुःखी हैं। मैंने उन्हें आपका परिचय देकर ढाढ़स बँधा रखा है। उन्हें अब एकमात्र आपका ही भरोसा है, अब आप चलकर उन्हें स्वीकार कीजिये और उनकी विपत्ति टालकर उनसे सेवा लीजिये।' हनुमान्‌ने आनन्दमग्न होकर दोनों भाइयोंको अपने दोनों कन्धोंपर बैठा लिया और वे उन्हें सुग्रीवके पास ले चले।

राम और सुग्रीवकी मित्रता हुई। उन्होंने अग्निको साक्षी बनाकर सख्य-सम्बन्ध स्थापित किया। बालि मारा गया और सुग्रीव वानरोंके राजा हुए। चौमासेमें भगवान् राम और लक्ष्मण प्रवर्षण गिरिपर निवास करते रहे। सुग्रीव भोग-विलासमें पड़कर रामका काम भूल गये। परंतु हनुमान् कैसे भूलते? उन्होंने कई बार सुग्रीवको समझानेकी चेष्टा की, किंतु सुग्रीवने सुनी-अनसुनी कर दी। वे अपने काममें लग गये। जब लक्ष्मणने सुग्रीवको उपेक्षा करते देखा, तब वे बड़े क्रोधित हुए। अभी उन्हें तारा मना रही थी कि हनुमान्‌के बुलाये हुए वानर-भालुओंकी अपार सेना आ पहुँची। यह उद्योग देखकर लक्ष्मण सुग्रीवपर प्रसन्न हो गये। सुग्रीव भगवान् रामके पास आये और उन्होंने अपने प्रमादके लिये क्षमा माँगी। भगवान् रामके सामने देश-देशान्तरोंका वर्णन करके सुग्रीव सीताको ढूँढ़नेके लिये वानरी सेना भेजने लगे। सीताके सम्बन्धमें इतना पता तो था ही कि रावण उन्हें दक्षिण दिशामें ले गया है, परंतु वानरोंको सब ओर भेजनेका अभिप्राय यह था कि और वानर इकट्ठे किये जायँ तथा यदि रावणने

सीताको कहीं अन्यत्र रख दिया हो तो उसका भी पता चल जाय। सुग्रीवने शासनके शब्दोंमें कहा—'जो एक महीनेमें निर्दिष्ट स्थानोंका पता लगाकर नहीं लौटेगा, उसे मैं बड़ा कठोर दण्ड दूँगा।' सबने निर्दिष्ट दिशाओंकी यात्रा की।

दक्षिण दिशामें ढूँढ़नेका काम बड़ा ही महत्त्वपूर्ण था। इसलिये यह काम मुख्य-मुख्य वानर-वीरोंको ही सौंपा गया। जाम्बवान्, हनुमान्, अंगद, नल, नील आदिको बुलाकर उनके कामकी गुरुता समझायी। उनके मनमें उस समय यह भाव उठा कि ये वीर अवश्य ही अपना काम पूरा करेंगे, विशेष करके हनुमान्‌के लिये तो कोई काम असम्भव है ही नहीं। उन्होंने बड़ी प्रसन्नता और प्रेमसे कहा—'हनुमान्! जलमें, थलमें, नभमें—सर्वत्र तुम्हारी एक-सी गति है। स्वर्ग अथवा अन्तरिक्षमें भी ऐसा कोई नहीं, जो तुम्हारी गति रोक सके। तुम अपने पिताके समान ही गति, वेग, तेज और स्फूर्तिसे युक्त हो। तुम सब कुछ जानते ही हो, तुमसे और क्या कहूँ? तुम्हारा काम केवल स्थानोंमें देख आना ही नहीं है, बल्कि तुम्हारा काम सीताको पाना है। मेरा तुमपर पूर्ण विश्वास है कि तुम सीताका पता लगाकर ही लौटोगे।'

सुग्रीवकी बात सुनकर भगवान् रामने हनुमान्‌को बुलाया। भगवान् तो पहलेसे ही जानते थे, परंतु सुग्रीवकी बातोंसे उन्हें और भी स्मृति हो आयी। उन्होंने हनुमान्‌से कहा—'हनुमान्! तुम मेरा कार्य अवश्य पूर्ण करोगे। यह मेरी अँगूठी ले जाओ, इसे देखकर सीता विश्वास कर लेंगी कि तुम रामके दूत हो।' सीतासे कहनेके लिये उन्होंने संदेश भी दिये। हनुमान् आदि उनके चरणोंका स्पर्श करके वहाँसे चल पड़े।

× × × ×

हनुमान्, जाम्बवान्, अंगद आदि ढूँढ़ते-ढूँढ़ते थक गये। भूख-प्यासके मारे व्याकुल हो गये। पानीका कहीं पता नहीं, कई दिनोंसे फलोंके दर्शन भी नहीं मिले। सारी जिम्मेवारी हनुमान्‌पर आयी। उस भीषण पर्वतके एक शृंगपर चढ़कर उन्होंने देखा तो पास ही कुछ हरियाली दीख पड़ी। कुछ सुन्दर-सुन्दर पक्षी अपने पंखोंसे पानी छिड़कते आते दीख पड़े। अनुमान हुआ कि यहाँ कोई सुन्दर बगीचा और जलाशय

होगा। सबको लेकर वे उधर ही गये। वहाँ जानेपर मालूम हुआ कि एक गुफामेंसे ही ये सब निकल रहे हैं। एक-दूसरेका हाथ पकड़कर भगवान् रामका स्मरण करते हुए वे गुफामें घुस पड़े। बड़ी ही सुन्दर गुफा थी, वहाँके झरनेमें अमृतमय जल था। सोने-से वृक्ष थे और उनमें बड़े ही स्वादिष्ट फल लगे हुए थे। वहाँकी तपस्विनीसे अनुमति लेकर सबने खाया-पिया, स्वस्थ हुए।

उस तपस्विनीके पूछनेपर हनुमान्‌ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया और इच्छा प्रकट की कि जहाँतक हो सके शीघ्र ही हमलोग यहाँसे निकल जायँ तो अच्छा है। उस तपस्विनीने कहा—'भैया! यहाँ आनेपर फिर कोई जीवित नहीं लौटता। यह निर्विघ्न तपस्या करनेका स्थान है, यदि लोग यहाँसे लौटने लगें तो यहाँकी तपस्यामें विघ्न पड़े। परंतु तुमने मुझे भगवान् रामकी कथा सुनायी है; इसलिये तुमलोगोंको तपस्याके बलसे मैं यहाँसे निकाल ले चलती हूँ। मुझे भी भगवान् रामके दर्शनके लिये प्रवर्षण गिरिपर जाना है। अच्छा, अब तुमलोग अपनी आँखें बंद कर लो।' वानर-भालुओंने अपने-अपने हाथोंसे अपनी-अपनी आँखें बंद कर लीं। क्षणभरमें ही उन्होंने देखा कि सब समुद्रके किनारे एक ऊँचे पर्वतपर खड़े हैं। हनुमान्‌से अनुमति लेकर वह तपस्विनी भगवान् रामके दर्शनके लिये चली गयी।

× × × ×

अंगदने कहा—'भाई! अब एक महीना बीत गया, न हमलोग जानकीका पता लगा सके और न तो जहाँ-जहाँ जाना चाहिये था, वहाँ-वहाँ जा ही सके। अब वहाँ जानेपर सुग्रीव मुझे अवश्य मार डालेंगे। इसलिये मैं अब यहाँ रहकर तपस्या करूँगा। तुमलोग जाओ।' हनुमान्‌ने कहा—'युवराज! आप असमय ही क्यों हिम्मत हार रहे हैं? सुग्रीव आपसे बड़ा प्रेम करते हैं। आप अपने जी-जानसे भगवान् रामका कार्य सिद्ध होनेके लिये चेष्टा करते रहे हैं। गुफामें जानेके कारण हमलोगोंको देर हो गयी है, वे अवश्य क्षमा कर देंगे और आपको राजा बनायेंगे। आप घबराइये मत! भगवान् राम बड़े दयालु हैं, वे सर्वथा आपकी रक्षा करेंगे। चलिये, हमलोग अपनी शक्तिभर उनकी आज्ञाका पालन तो करें। यदि

आप सुग्रीवसे द्वेष करते हैं, उनके राजा होनेसे आपको दुःख हुआ है और यहाँ रहकर आप बचना चाहते हैं तो यह कदापि सम्भव नहीं है। आप रामके कामसे जी चुराकर चाहे जहाँ भी छिपें, लक्ष्मणके बाणोंसे नहीं बच सकते। उनका काम न करनेपर जब बच ही नहीं सकते तो उनके पास चलना ही अच्छा है, जैसा वे करेंगे वैसा होगा।' हनुमान्‌की बात सुनकर अंगदने जीवित रहनेका संकल्प तो छोड़ दिया; परंतु उन्होंने सुग्रीवके पास जानेकी अपेक्षा वहीं अनशन करके प्राण त्याग करना अच्छा समझा। उनके साथ सभी अनशन करने लगे। रामचर्चा होने लगी।

उसी समय सम्पातिके दर्शन हुए। उससे सीताका पता मालूम हुआ, सब वानर-भालू समुद्रके तटपर इकट्ठे हुए। कौन पार जा सकता है, इस विषयपर विचार होने लगा। अंगदके अत्यन्त ओजस्वी भाषण देनेपर सबने अपनी शक्ति पृथक्-पृथक् बतायी और समुद्र पार जानेमें असमर्थता प्रकट की। अंगदने भी कहा—'मैं किसी प्रकार पार तो जा सकता हूँ, परंतु लौट सकूँगा या नहीं इसमें कुछ संदेह है।' जाम्बवान्‌ने उन्हें युवराज कहकर सम्मानित किया और उनके जानेका विरोध किया। उन्होंने स्वयं भी अपनी वृद्धताके कारण जानेमें लाचारी प्रकट की। अबतक हनुमान् चुप थे। वे एक कोनेमें बैठे-बैठे सबकी बातें सुन रहे थे। अंगद निराश हो गये थे। सीताका पता मिल जानेपर वानरोंमें जो प्रसन्नता आ गयी थी, उसका अब कहीं पता नहीं था। जाम्बवान्‌ने अंगदको सम्बोधन करके कहा—'युवराज! निराश होनेका कोई कारण नहीं है। समुद्र पार जानेके लिये केवल बलकी ही आवश्यकता नहीं है, विशाल बुद्धिकी भी आवश्यकता है। इस कार्यके लिये भगवान् शंकरने स्वयं अवतार धारण किया है। राक्षसोंका संहार अवश्यम्भावी है।' उन्होंने हनुमान्‌की ओर देखकर कहा—'हनुमान्! तुम चुपचाप कैसे बैठे हो? तुम्हारा जन्म ही रामके कार्यके लिये हुआ है। वायुनन्दन! तुम अपने पिताके समान क्षणभरमें ही समुद्र पार हो सकते हो। तुम्हारी बुद्धि अप्रतिम है। तुम विवेक और ज्ञानके निधान हो। तुम अपने अंदर इतना बल लेकर चुपचाप

कैसे बैठे हो?' जाम्बवान्ने हनुमान्के जन्म, देवताओंके वरदान और ऋषियोंके शापकी कथा कही तथा स्मरण कराया कि तुम जो चाहो कर सकते हो।

हनुमान् निरन्तर भगवान्के स्मरणमें ही तन्मय रहते थे। उन्हें अपने-आपकी अथवा अपने बलकी स्मृति ही नहीं रहती थी। जाम्बवान्की बात सुनते ही उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि मुझमें अपार शक्ति है। मुझपर भगवान्की अनन्त कृपा है और भगवान्की सारी शक्ति मेरी शक्ति है। उनका शरीर बढ़कर सुमेरु पर्वतका-सा हो गया। उन्होंने गर्जना करते हुए कहा—'इस समुद्रमें क्या रखा है, भगवान्की कृपासे मैं ऐसे-ऐसे सैकड़ों समुद्र लाँघ सकता हूँ। यदि लंकामें मुझे सीता न मिली तो मैं स्वर्गसे लेकर ब्रह्मलोकतक छान डालूँगा, लंकाके साथ त्रिकूट पर्वतको उखाड़ लाऊँगा, रावणको मार डालूँगा, ऐसी कोई शक्ति नहीं, जो भगवान्का कार्य करते समय मेरे मार्गमें रोड़ा अटका सके।' हनुमान्की गर्जना सुनकर सम्पूर्ण वानरी सेना हर्षनाद करने लगी। जाम्बवान्ने कहा—'हनुमान्! तुम सब कुछ कर सकते हो; परंतु इस समय यह सब करनेकी आवश्यकता नहीं। तुम केवल सीताको देख आओ। भगवान् रामके साथ हम सब लंका चलेंगे, भगवान्के बाणोंसे राक्षसोंका उद्धार होगा, रामकी कीर्ति होगी और हम सब आनन्दोत्सव मनायेंगे।' जाम्बवान्की बात सुनते ही हनुमान् उछलकर एक बड़े ऊँचे पर्वत-शृंगपर चढ़ गये। उनके चरणोंके आघातसे बड़े-बड़े पर्वत-शृंग टूटकर गिरने लगे। उनकी पूँछकी चोटसे बड़े-बड़े वृक्ष आकाशमें उड़ने लगे, उनमेंसे टूटकर बहुत-से फूल हनुमान्पर इस प्रकार गिर रहे थे, मानो वे उनकी पूजा कर रहे हों। देवताओंने जय-जयकार किया, ऋषियोंने शान्तिपाठ किया, वायुने सहायता की, समुद्र-पार जानेके लिये हनुमान् उछल पड़े। उन्होंने भगवान्को स्मरण करके वानरोंको आश्वासन दिया कि मेरे मनमें बड़ा उत्साह है, बड़ा हर्ष है, भगवान्की असीम कृपाका अनुभव हो रहा है, मैं काम पूरा करके शीघ्र ही आऊँगा; तुमलोग घबराना मत और फिर भगवान्के नामकी जयध्वनि करके वे चल पड़े। उनके वेगसे प्रभावित होकर बहुत-से वृक्ष उनके

साथ उड़ने लगे। दल-के-दल बादल उनके शरीरके कठोर स्पर्शसे तितर-बितर होकर करस्वरूप उनके शरीरपर कुछ शीतल जलबिन्दु डालने लगे। श्रीमारुतिराय और किसी ओर न देखकर आकाशमार्गसे ही चले जा रहे थे।

समुद्रने सोचा कि रामके पूर्वजोंने ही मुझे यह रूप दान किया है; परंतु मैंने उनका कोई उपकार नहीं किया। कहीं रामके मनमें यह बात न आ जाय कि सीताहरणमें समुद्रका भी हाथ रहा है; क्योंकि एक प्रकारसे रावण मेरे अंदर ही रहता है। मैं ही उसके किलेकी खाई हूँ, यदि मैं उनके दूतका स्वागत करूँ, उसके विश्रामके लिये कोई उपाय कर सकूँ तो सम्भव है मैं इस लांछनसे बच जाऊँ।' उसने मैनाकसे कहा—'मैनाक! रामदूतका स्वागत करो।' मैनाक बड़ा विशाल रूप धारण करके समुद्रके ऊपर निकल आया। हनुमान्‌ने समझा कि यह कोई विघ्न है। वे अपने पैरोंके प्रहारसे उसे पातालगामी करने ही जा रहे थे कि मैनाक मनुष्यका रूप धारण करके अपने श्रृंगपर खड़ा हो गया और उसने निवेदन किया कि 'हनुमान्! तुम मेरे सहायक वायुके पुत्र हो। जब इन्द्र अपने वज्रद्वारा पर्वतोंकी पाँखें काट रहे थे, तब तुम्हारे पिताकी सहायतासे ही मैं समुद्रमें आ घुसा और अपनेको बचा सका। मैं तुम्हें विश्राम देना चाहता हूँ, थोड़ी देर थकावट मिटाकर फिर जाना। भगवान् रामका काम तो सारे जगत्‌का काम है न! उनके दूतकी सहायता करना सारे जगत्‌की सहायता करना है। आशा है, तुम मेरी प्रार्थना स्वीकार करोगे।'

हनुमान्‌ने बड़े प्रेमसे अपने हाथोंद्वारा मैनाकका स्पर्श किया और कहा—'मैनाक! तुम मुझपर बड़ा स्नेह रखते हो। तुम मेरे पिताके समान वन्दनीय हो। मुझे तुम्हारी आज्ञाका पालन करना चाहिये; परंतु मैं इस समय भगवान् रामके कामसे जा रहा हूँ। मेरा हृदय उनके कामके लिये अशान्त है। यदि मैं विश्राम करनेके लिये अपने शरीरको रोक दूँ तो सम्भव है कि मेरा हृदय शरीरको यहीं छोड़कर लंकामें पहुँच जाय। इस समय मैं एक क्षण भी नहीं रुक सकता, मुझे क्षमा करो।' हनुमान् चलते-चलते इतना कहकर आगे बढ़े।

देवताओंने सोचा कि हनुमान्‌में बल तो है, विद्याकी भी कई बार परीक्षा हो चुकी है; परंतु राक्षसोंके बीचमें जाकर सकुशल लौट आनेकी बुद्धि इनमें है या नहीं, यह बात जान लेनी चाहिये। उन्होंने दक्षपुत्री, कश्यपपत्नी और नागमाता सुरसाको हनुमान्‌की परीक्षाके लिये भेजा। वह आकर हनुमान्‌के मार्गमें खड़ी हो गयी और कहने लगी कि आज मुझे प्रारब्धवश भोजन मिला है, मैं पेटभर खाऊँगी। हनुमान्‌ने पहले तो यही कहा कि 'रामका काम है, मुझे पहले कर लेने दो, तब खा जाना। मैं मृत्युसे नहीं डरता।' परंतु जब उसने अस्वीकार कर दिया, तब हनुमान्‌ने मुँह फैलानेको कहा। वह जितना ही मुँह फैलाती, हनुमान् उसके दुगुने हो जाते। जब उसने सौ योजनका मुँह बना लिया, तब हनुमान् छोटा-सा रूप बनाकर उसके मुँहमें घुसकर फिर बाहर निकल आये। हनुमान्‌के बुद्धिकौशलको देखकर सुरसा बहुत प्रसन्न हुई और उसने सफलताका आशीर्वाद देकर बिदा किया।

राहुकी माता सिंहिका समुद्रमें ही रहती थी। ऊपर उड़नेवालोंकी छाया जलमें पड़ती तो वह छाया ही पकड़ लेती और उड़नेवाला विवश होकर जलमें गिर पड़ता। इस प्रकार वह अनेकोंका संहार कर चुकी थी। हनुमान्‌के साथ भी उसने वही चाल चली। अपनी गतिको रुकती देखकर हनुमान्‌ने नीचे दृष्टि डाली और उस राक्षसीको पहचान लिया। भला, वह हनुमान्‌के सामने क्या ठहरती, एक हलकी-सी चोटमें ही उसका काम तमाम हो गया और हनुमान् निर्विघ्न समुद्रके दूसरे तटपर पहुँच गये। बड़ा सुन्दर वन था। हरे-भरे वृक्ष, सुगन्धित पुष्प, पक्षियोंका कलरव और भौंरोंकी गुंजार बरबस मनको अपनी ओर खींच रही थी। परंतु हनुमान्‌ने उनकी ओर देखातक नहीं। वे कूदकर पहाड़के एक ऊँचे टीलेपर चढ़ गये। उन्होंने निश्चय किया कि यह स्थान शिविर बनानेके योग्य है। वानरोंके लिये यहाँ फल-मूल भी पर्याप्त हैं, मीठा जल भी है और सबसे बड़ी बात यह है कि यहाँसे पूरी लंका दीख रही है। हनुमान्‌ने वहाँसे लंकाकी बहुत-सी बातें जान लीं। उन्होंने लंकादुर्गकी दुर्गमताका अनुमान करके निश्चय किया कि इसकी एक-एक बात जान लेनी चाहिये। सीताको ढूँढ़नेके साथ-साथ यह काम कर लेना भी मेरा कर्तव्य है।

इतने बड़े विशाल शरीरसे लंकामें जाना और वहाँकी प्रत्येक बातको गौरसे देखना असम्भव था; इसलिये महावीर हनुमान्‌ने मानो अणिमा सिद्धिका प्रयोग करके अपनेको छोटा-सा बना लिया और भगवान्‌का स्मरण करते हुए वे लंकाके द्वारपर पहुँचे। लंकानगरकी अधिष्ठात्री देवी लंकिनीने संध्याके समय छिपकर इन्हें घुसते हुए देखा। उसे बड़ी शंका हुई। उसने हनुमान्‌के पास आकर डाँटा—'क्या तुम चोरी करना चाहते हो?' हनुमान्‌ने एक हलका-सा घूँसा उसकी पीठपर जमाया और वह खून उगलती हुई जमीनपर धमसे गिर पड़ी। उसने अपनेको सँभालकर कहा—'जाओ, मैं तुम्हें पहचान गयी।' ब्रह्माने मुझे पहले ही बता दिया था कि 'जब वानरके मारनेसे तुम्हारी ऐसी दशा हो जाय, तब जान लेना कि रावणका अन्त आ गया है।' हनुमान्‌ने अंदर प्रवेश किया। उन्होंने लंकामें प्रवेश करके राक्षसोंके आहार-विहार और शयनादिके स्थान देखे। उनके अस्त्रागार, मन्त्रणागृह, छावनी आदि भी देखे। सीताको ढूँढ़नेके लिये उन्होंने राक्षसराज रावणके अन्तःपुरमें भी बड़ी छानबीन की। मन्दोदरी आदि स्त्रियोंको भी देखा; परंतु सीताका कहीं पता न चला। वे चिन्तित-से हो गये। उनके मनमें बड़ी ग्लानि हुई। वे सोचने लगे कि 'कहीं मैंने धर्मका उल्लंघन तो नहीं किया है। पर-स्त्रियोंको देखना अधर्म है। मैंने अबतक कभी यह पाप नहीं किया था। आज मुझसे बड़ा अन्याय हुआ।' वे चिन्तामें पड़ गये। दूसरे ही क्षण उनके मनमें दूसरी बात आयी। उस समय भगवान्‌के स्मरणसे उनका चित्त स्वच्छ हो गया था और वे एक निश्चयपर पहुँच चुके थे। उन्होंने सोचा कि 'मैंने पर-स्त्रियोंको देखा तो अवश्य है, परंतु उन्हें बुरी दृष्टिसे नहीं देखा है। आवश्यकतावश देखा है और मेरे मनमें तनिक भी विकार नहीं है। इन्द्रियोंकी शुभ या अशुभ प्रवृत्तिमें मन ही कारण हुआ करता है और मेरा मन सुव्यवस्थित है। मैं सीताको और कहाँ ढूँढ़ता। स्त्रीको हरिणियोंमें तो ढूँढ़ा नहीं जाता, स्त्रियोंमें ही ढूँढ़ा जाता है। मैंने शुद्ध मनसे ही ढूँढ़ा है, इसलिये मेरा कोई दोष नहीं है। हनुमान्‌ने और स्थानोंमें भी ढूँढ़नेका प्रयत्न किया। आगे बढ़नेपर उन्हें एक छोटा-सा कुटीर मिला। उस कुटीरकी भीतपर जगह-जगह

राम-नाम लिखे हुए थे, जो कि मणियोंकी जगमगाहटके कारण रातमें भी स्पष्ट दीख रहे थे। छोटी-छोटी क्यारियोंमें तुलसीके वृक्ष, केसर और सुगन्धित फूल लगे हुए थे। उस पर्णकुटीके सामने ही एक छोटा-सा भगवान्का मन्दिर था और उसपर भगवान्के आयुधोंके चित्र बने हुए थे। हनुमान्को बड़ा आश्चर्य हुआ कि लंकामें ऐसा स्थान कहाँ! उन्हें हर्ष भी हुआ!

ब्राह्ममुहूर्तका समय था। विभीषण जागकर राम-राम करने लगे थे। हनुमान्को यह विश्वास हो गया कि यह तो कोई संत है। उन्होंने उनसे परिचय करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया। हनुमान्ने ब्राह्मणका रूप धारण करके 'राम-राम' की ध्वनि की। विभीषण तुरंत बाहर निकल आये, दोनों भगवद्भक्त परस्पर गले लगे, दोनोंके हृदय प्रेम और आनन्दसे भर गये। हनुमान्को विभीषणके हृदयमें साक्षात् भगवान् दीख रहे थे और विभीषण हनुमान्को मानो साक्षात् भगवान् ही समझ रहे थे। परिचय हुआ। हनुमान्के पास कहनेके लिये अपनी बात तो थी ही क्या, उन्होंने अपने दयालु प्रभुके पावन चरित्र और सीताहरणका प्रसंग सुनाकर अपने आनेका कारण बताया। विभीषणने कहा—'प्यारे हनुमान्! मैं यहाँ वैसी ही सतर्कता और कठिनतासे रहता हूँ, जैसे दाँतोंके बीच बेचारी जीभ रहती है। प्रभु मुझ अनाथको भी कभी अपनायेंगे? मेरी जाति तमोगुणी है। मुझसे कुछ साधन बनता नहीं। भगवान्के चरणोंमें प्रेम है नहीं, मैं कैसे आशा करूँ कि मुझे भगवान् मिलेंगे; परंतु अब तुम्हें देखकर मेरे मनमें निश्चय हो रहा है, क्योंकि भगवत्कृपाके बिना उनके कृपापात्र संतोंका दर्शन नहीं होता। भगवान्की कृपासे ही तुमने घर आकर मुझे दर्शन दिये हैं। निश्चय ही संत-दर्शन भगवान्के मिलनेकी सूचना है।' हनुमान्ने कहा—'विभीषण! हमारे भगवान् बड़े ही दयालु हैं। वे सर्वदासे दीनजनोंपर कृपा करते आये हैं। तुम तो अपनी बात कहते हो। भला, मैं ही कौन-सा कुलीन हूँ। वानर, चंचल और साधनहीन! दूसरोंकी भलाई तो मुझसे दूर रही, यदि प्रातःकाल कोई मेरा नाम ले ले तो उसे दिनभर भोजन न मिले। सखा विभीषण! मैं इतना अधम हूँ, फिर भी मुझपर भगवान्ने कृपा की

है। जो ऐसे स्वामीको जानकर भी नहीं भजते, संसारमें भटकते रहते हैं, वे दुःखी क्यों न होंगे!' भगवान्की गुणावलीका स्मरण करके हनुमान्का हृदय गद्गद हो गया। उनकी आँखें प्रेमके आँसुओंसे भर गयीं। विभीषण और हनुमान्में बहुत-सी बातें हुईं। विभीषणके बतलानेपर हनुमान् अशोकवनमें गये।

माँ सीता अशोकके नीचे बैठी हुई थीं। उनका शरीर सूख गया था, बालोंकी जटा बँध गयी थी, सिरपर सौभाग्यका चिह्न एक वेणीमात्र था। वे निरन्तर भगवान्के नामका जप और मन-ही-मन भगवान्की लीला तथा गुणोंका स्मरण कर रही थीं। हनुमान्ने दूरसे ही उन्हें मानसिक प्रणाम किया और एक वृक्षपर चढ़कर बैठ गये। रावण आया और उसने सीताको फुसलानेकी चेष्टा की; फिर धमकाया; पर सीताकी दृढ़ता, पवित्रता, रामनिष्ठा और सतीत्वसे प्रभावित होकर वह लौट गया। बहुत-सी राक्षसियाँ सीताको रावणके अनुकूल करनेके लिये समझाने लगीं। इन बातोंसे सीताको बड़ी पीड़ा हुई। रामका पता न चलनेके कारण उनके अनिष्टकी भी आशंका हुई, ऐसा मालूम हुआ कि अब वे जीवित न रहेंगी। त्रिजटा अपने स्वप्नका वृत्तान्त कहकर उन्हें आश्वासन देने लगी और बहुत-सी राक्षसियाँ वहाँसे चली गयीं। थोड़ी देर बाद त्रिजटा भी चली गयी।

सीताको अत्यन्त व्यथित देखकर हनुमान्ने राम-जन्मसे लेकर विवाह, वनगमन, सीताहरण आदिकी बातें वृक्षपरसे ही कहीं और अन्तमें बतलाया कि 'मैं उन्हींके भेजनेसे यहाँ आया हूँ।' हनुमान्की यह अमृतमयी वाणी सुनकर सीताको बड़ा संतोष हुआ, परंतु दूसरे ही क्षण एक आशंकासे उनका हृदय सिहर भी उठा। उन्होंने सोचा कहीं यह भी राक्षसी माया न हो। हनुमान्ने सीताका भाव ताड़ लिया। उन्होंने कहा—'माता! मैं करुणानिधानके चरणोंकी शपथ लेकर कहता हूँ कि मैं भगवान् रामका सेवक हूँ। उन्होंने आपके विश्वासके लिये मुझे एक अन्तरंग कथा बतायी है। जब आप वनमें उनके साथ थीं और जयन्तने कौएका वेष धारण करके आपपर आक्रमण किया था, तब भगवान्ने

उसपर इषीकास्त्रका प्रयोग किया और उसे त्रिलोकीमें कहीं भी शरण नहीं मिली। आपकी अँगूठी, जिसे केवटको देनेके लिये आपने उन्हें दी थी और भगवान्‌ने जिसे अपनी अंगुलीमें धारण कर रखा था, उसे भी भगवान्‌ने आपके विश्वासके लिये मुझे दिया है। आप मेरा विश्वास करें, मैं आपके चरण छूता हूँ।'

हनुमान्‌का हृदय वास्तवमें निश्छल था और उन्होंने सच्चा प्रमाण भी दे दिया, इसलिये सीताको विश्वास हो गया। उन्होंने हनुमान्‌को नीचे बुलाया तथा अँगूठी लेकर वे आनन्दमग्न हो गयीं। उन्हें भगवान्‌का संदेश पाकर इतना आनन्द हुआ मानो स्वयं प्राणप्रिय भगवान् ही मिल गये हों। उन्होंने हनुमान्‌से कहा—'हनुमान्! आज तुमने मेरा बड़ा उपकार किया है। यदि मैं यह समझकर कि भगवान् मुझे भूल गये अथवा उनका कोई अनिष्ट हो गया, मर जाती तो यह बात सुनकर उन्हें कितना कष्ट होता! मेरे कारण वे दुःखी होते। हनुमान्! क्या वे कभी मेरा स्मरण करते हैं? क्या मैं उन्हें कभी देख पाऊँगी! क्या वे शीघ्र ही मेरा उद्धार करेंगे? कहते-कहते सीताका गला भर आया, आँखोंमें आँसू आ गये, वे बोल न सकीं। हनुमान्‌ने कहा—'माता! तुम इतनी दुःखी क्यों हो रही हो! राम तुम्हारे लिये कितने दुःखी हैं इसका वर्णन मैं नहीं कर सकता। वे पृथ्वीको देखकर कहते हैं कि 'माँ पृथ्वी! मेरे कारण तुम्हारी प्यारी पुत्रीको बड़ा कष्ट हुआ है। क्या इसीसे तुम मुझपर नाराज हो, जो मुझे समा जानेके लिये स्थान नहीं दे रही हो!' वे खिले हुए फूलों और कलियोंको देखकर कह उठते हैं कि 'लक्ष्मण! इन्हें चुन लाओ; मैं सीताके बालोंमें गूँथूँगा।' माता! उनकी विरह-कथा अवर्णनीय है। वे अपनेको भूल जाते हैं और सदा तुम्हारी ही याद किया करते हैं।

हनुमान्‌ने पुनः कहा—'माता! उन्होंने आपको सम्बोधित करके कहा है—'प्रिये! तुम्हारी उपस्थितिमें जो वस्तुएँ मेरे लिये सुखकर थीं, वे ही आज दुःखकर हो रही हैं। सुन्दर-सुन्दर वृक्षोंकी नयी-नयी कोंपलें आज मुझे आग-सी जान पड़ती हैं। चन्द्रमा ग्रीष्म-ऋतुके सूर्यकी भाँति जलाता है और बादलोंकी नन्हीं-नन्हीं बूँदें जो पहले

अमृतके समान जान पड़ती थीं, अब जलते हुए तेल-सी मालूम पड़ती हैं। शीतल, मन्द सुगन्ध वायु विषैले साँपोंकी साँसोंके समान मुझे पीड़ा पहुँचाता है। यदि मैं अपना यह उद्वेग, यह आवेग किसीपर प्रकट कर पाता तो मेरा हृदय कुछ हलका हो जाता। परंतु किससे कहूँ, क्या कहूँ! कोई समझे भी तो! हम दोनोंका जो पारस्परिक प्रेम है, एक-दूसरेकी आत्माका संयोग है, मिलन है, उसका रहस्य केवल मेरा हृदय, मेरी आत्मा ही जानती है और मेरा हृदय, मेरी आत्मा सर्वदा तुम्हारे पास ही रहती है, एक क्षणके लिये भी तुमसे बिछुड़ती नहीं। तुमसे अलग होती नहीं।* क्या इतनेसे हमारे अनिर्वचनीय प्रेमकी व्याख्या हो जाती है! मैं तो कहूँगा, कदापि नहीं; परंतु और कहा ही क्या जा सकता है?'

यह कहते समय हनुमान् भावाविष्ट हो गये थे। सीताको ऐसा मालूम हुआ मानो स्वयं राम उनके सामने खड़े होकर बोल रहे हैं। वे प्रेममग्न हो गयीं, शरीरकी सुधि भूल गयीं। हनुमान्ने उन्हें धैर्य बँधाते हुए कहा—'माता! भगवान्के प्रभाव, ऐश्वर्य और बलकी ओर देखो। उनके बाणोंके सामने ये तुच्छ राक्षस एक क्षण भी नहीं ठहर सकते। समझ लो कि ये मर गये। भगवान्को अबतक आपका पता नहीं मिला था, नहीं तो वे न जाने कब राक्षसोंका संहार करके आपको ले गये होते। हम सब वानर-भालू उनके साथ आयेंगे और निशिचरोंको पछाड़-पछाड़कर मारेंगे और आपको लेकर आनन्द मनाते हुए अयोध्या चलेंगे।'

माता! आप क्या प्रभुका प्रभाव भूल गयी हैं? वे मालूम होते ही वहाँसे सैनिकोंके साथ चल पड़ेंगे, बाणोंसे समुद्रको स्तम्भित कर देंगे, लंकामें एक भी राक्षस नहीं बचेगा। यदि देवता, दानव और स्वयं मृत्यु भी भगवान् रामके मार्गमें विघ्न डालना चाहेंगे तो वे उन्हें भी नष्ट कर देंगे। माता! 'मैं शपथपूर्वक कहता हूँ, तुम्हारे वियोगसे राम जितने व्यथित हैं, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वे एक क्षणका भी विलम्ब नहीं

---

* तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। .... ॥

करेंगे। आप उन्हें शीघ्र ही सकुशल देखेंगी।' सीताने कहा—'हनुमान्! अबतक दस महीने बीत गये, अब दो ही महीने बाकी हैं, यदि इनके बीचमें ही भगवान्ने मेरा उद्धार नहीं किया तो मैं उनके दर्शनसे वंचित रह जाऊँगी। मैं उनके दर्शनकी आशासे ही जीवित हूँ। रावणने अबतक मुझे मार डाला होता, यदि विभीषणने अनुनय-विनय करके मेरी रक्षा न की होती। सीता हनुमान्से ये बातें कहते-कहते व्याकुल हो गयीं, उनका गला सूख गया, वे बोल न सकीं।

हनुमान्ने कहा—'माता! मैंने कहा न कि भगवान् मेरी बात सुनते ही चल पड़ेंगे। परंतु उनके आनेकी क्या आवश्यकता है? मैं आज ही आपको इस दुःखसे मुक्त करता हूँ। आप मेरी पीठपर चढ़ जाइये, मैं आपको पीठपर लेकर समुद्र लाँघ जाऊँगा। जैसे अग्नि हवन किये हुए हविष्यको तत्काल इन्द्रके पास पहुँचा देता है, वैसे ही मैं आपको तत्काल प्रवर्षण गिरिपर विराजमान भगवान् रामके पास पहुँचाये देता हूँ। भगवान्की कृपासे न केवल आपको बल्कि रावणके साथ सारी लंकाको मैं ढोकर ले जा सकता हूँ। अब देर मत कीजिये। जब मैं आपको लेकर चलूँगा तब कोई भी राक्षस मेरा पीछा नहीं रह सकेगा।' हनुमान्की बात सुनकर सीताको बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने कहा—'हनुमान्! तुम्हारा शरीर बहुत छोटा है, तुम मुझे ले चलनेका साहस कैसे कर रहे हो?' हनुमान्ने सीताको अपना विराट् रौद्ररूप दिखलाया। वे बढ़कर सुमेरु पर्वतके समान हो गये। उन्होंने सीतासे कहा—'देवि! अब देर मत करो। कहो तो राक्षसोंके साथ लंकाको ले चलूँ? कहो तो राक्षसोंको मारकर लंकाको ले चलूँ। निश्चय कर लो और चलकर राम-लक्ष्मणको सुखी करो।'

जानकीने कहा—हनुमान्! मैं तुम्हारी शक्ति, तुम्हारा बल जान गयी। तुम वायु और अग्निके समान प्रतापशाली हो। तुम मुझे ले चल सकते हो। परंतु तुम्हारे साथ मेरा जाना ठीक नहीं है। मैं तुम्हारे तीव्र वेगसे मूर्च्छित हो सकती हूँ। तुमपरसे गिर सकती हूँ। राक्षसोंसे तुम्हें बड़ी लड़ाई करनी पड़ेगी और मेरे पीठपर रहनेसे तुम्हें बड़ी आपत्तियोंका सामना

करना पड़ेगा। युद्धकी बात है, पता नहीं तुम जीतोगे या वे जीतेंगे। तुम जीत भी सकते हो; परंतु इससे भगवान्‌का यश नहीं बढ़ता। मेरे इस प्रकार जानेसे बहुत लोग सोचेंगे कि हनुमान् अपनी पीठपर किसको लिये जा रहा है। एक ही क्षणके लिये सही, उन्हें हमारे चरित्रपर शंका हो सकती है।' सीताने और भी बहुत-से कारण बतलाते हुए कहा—'पतिभक्तिकी दृष्टिसे मैं स्वेच्छापूर्वक तुम्हारे शरीरका स्पर्श नहीं कर सकती। रावणने मेरा शरीर छू लिया था, वह तो विवशताकी बात थी, मैं असमर्थ थी, क्या करती?* जब राम यहाँ आकर राक्षसोंके साथ रावणको मारेंगे तब मैं उनके साथ चलूँगी और यही उनके योग्य होगा।' हनुमान्‌ने सीताकी बातोंका सम्मान किया। उनकी प्रशंसा की। सीताने कहा—'बेटा! तुम्हारी भक्ति, भगवान्‌पर विश्वास और तुम्हारा बल-पौरुष देखकर मुझे बड़ा संतोष हुआ है। मैं तुम्हें आशीर्वाद देती हूँ कि तुम बड़े बलवान्, शीलवान्, अजर-अमर और गुणी होओ। भगवान् सदा तुमपर स्नेह रखें।'

'भगवान् सर्वदा स्नेह रखें', यह सुनकर हनुमान् पुलकित हो गये। उन्हें और चाहिये ही क्या? जीवनका परम लाभ तो यही है। उन्होंने माताके आशीर्वादको अमोघ कहकर कृतकृत्यता प्रकट की।

माताका दर्शन हो जानेके बाद हनुमान्‌ने सोचा कि अब तो श्रीरामका रावणसे युद्ध होना निश्चित है, परंतु इसका किला इतना मजबूत है, इसकी चहारदीवारियाँ इतनी सुरक्षित हैं, इसके दरवाजोंपर ऐसे-ऐसे यन्त्र लगे हैं कि सहजमें इसे जीतना सम्भव नहीं है। इन्हें तोड़े बिना हमारे आक्रमणका मार्ग नहीं खुल सकता। परंतु इन्हें तोड़ा कैसे जाय, यह एक प्रश्न है। अच्छा! मैं तो वानर हूँ न। मैं फल तोड़कर खा सकता हूँ,

---

* भर्तुर्भक्तिं पुरस्कृत्य रामादन्यस्य वानर।
नाहं स्प्रष्टुं स्वतो गात्रमिच्छेयं वानरोत्तम॥
यदहं गात्रसंस्पर्शं रावणस्य गता बलात्।
अनीशा किं करिष्यामि विनाथा विवशा सती॥
(वा० रा० ५ । ३७ । ६२-६३)

क्योंकि अब भगवान्‌का काम हो चुका है। मैं वृक्षोंके कुछ डाल-पात तोड़ सकता हूँ, क्योंकि इन दुष्टोंको उत्तेजित करनेका यही एक मार्ग है। हनुमान्‌ने निश्चय कर लिया, उनकी बुद्धि और बल देखकर माताने भी अनुमति दे दी।

बागके अनेकों वृक्ष नष्ट हो गये। बागवान खदेड़ दिये गये। हजारों राक्षस धूलमें मिला दिये गये। एक घूँसेसे ही अक्षयकुमारकी हड्डी-पसली चूर-चूर हो गयी। सारी लंकामें तहलका मच गया। रावण पहले तो स्वयं ही युद्ध करनेके लिये आ रहा था, परंतु मेघनादने उसे रोक दिया। वह आया, हनुमान्‌के प्रहारोंसे उसके प्राणोंके लाले पड़ गये। उसने घबराकर ब्रह्मपाशका प्रयोग किया। यद्यपि ब्रह्माके वरदानसे हनुमान् ब्रह्मपाशसे मुक्त थे तथापि उन्होंने सोचा कि ब्रह्मपाशका अपमान नहीं करना चाहिये और रावणकी सभामें चलकर भगवान्‌की महिमा सुनानी चाहिये, जिससे राक्षस भयभीत हो जायँ। वे स्वयं ही ब्रह्मपाशमें बँध गये!

मेघनाद बड़ी प्रसन्नतासे उन्हें राजसभामें ले गया। वहाँ जाते-जाते वह बन्धन उनके शरीरसे छूटकर गिर चुका था। हनुमान्‌ने देखा कि रावणकी सभामें बड़े-बड़े देवता, लोकपाल, दिक्पाल हाथ जोड़े खड़े हैं। सूर्यका प्रकाश मन्द है, वायु पंखा झल रहा है और अग्निदेव आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। सब रावणके इशारेका इन्तजार कर रहे हैं। हनुमान् निश्शंक खड़े थे। रावणने उन्हें इस प्रकार अविनीत देखकर न जाने क्या सोचा और ठहाका मारकर हँसने लगा; परंतु दूसरे ही क्षण उसे अपने पुत्र अक्षयकुमारकी याद आ गयी। उसने डाँटकर पूछा—'तू कौन है, किसके बलपर तैंने ऐसा उत्पात मचा रखा है? क्या तू मुझे नहीं जानता? मैं अभी तुझसे समझता हूँ।' हनुमान्‌ने बड़े ही गम्भीर स्वरसे कहा—'रावण! जो सम्पूर्ण प्रकृतिके आश्रय हैं, जिनके रोम-रोममें कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड प्रतिक्षण पैदा होते और नष्ट होते रहते हैं, जिनकी शक्तिसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश—अपना-अपना काम करते हैं, जिनके कृपालेशसे शेषनाग पृथ्वीको धारण करनेमें समर्थ होते हैं, जो तुम्हारे-जैसे राक्षसोंको दण्ड देनेके लिये

ही अवतीर्ण हुए हैं, मैं, उन भगवान् रामका दूत हूँ। क्या तुम उन्हें नहीं जानते? जनकके धनुषयज्ञमें जो धनुष तुमसे हिलतक न सका था, उसे तिनकेकी भाँति तोड़ देनेवालेको तुम भूल गये हो! खर, दूषण और त्रिशिराको चौदह हजार सेनाके साथ अकेले मारनेवालेको तुम नहीं जानते? तुम्हें अपनी काँखमें दबा रखनेवाले बालिको जिन्होंने एक ही बाणसे मार डाला, उनको तुम नहीं जानते? रावण! तुम उन्हें भूल सकते हो, परंतु वे तुमको नहीं भूल सकते। जिनकी अनुपस्थितिमें वेष बदलकर, धोखा देकर, जिनकी धर्मपत्नीको तुम चुरा लाये हो, उन्हें भूलकर भी तुम बच नहीं सकते। मैं उन्हींका दूत हूँ। मुझे अच्छी तरह पहचान लो। अब देर नहीं है, उनके बाणोंसे लंका वीरान हो जायगी, इन तुम्हारे सभासदोंका नाम-निशानतक नहीं रहेगा।'

हनुमान्‌की निर्भीक वाणी सुनकर राक्षस काँपने लगे। उनके मनमें वह भय बैठ गया, जिसके कारण वे युद्धमें भी वीरताके साथ रामका सामना नहीं कर सके। देवतालोग मन-ही-मन प्रसन्न हो गये। रावणने हनुमान्‌की बातोंकी उपेक्षा कर दी। हनुमान्‌ने पुनः कहा—'भूख लगनेपर फल खाकर मैंने कोई अपराध नहीं किया है। पेड़-पत्ता तोड़ना तो मेरा स्वभाव ही है, जिन दुष्टोंने मुझे मारा है, उनसे आत्मरक्षा करनेके लिये मैंने भी प्रहार किया है। ज्यादती तो तुम्हारे पुत्रोंकी ही है, जिन्होंने मुझे बंदी बनानेकी चेष्टा की है, परंतु मैं उन्हें क्षमा करता हूँ। तुम मेरी एक बात सुनो, बस एक बात मान लो। मैं विनयसे कहता हूँ, प्रेमसे कहता हूँ और सच्चे हृदयसे तुम्हारे हितके लिये कहता हूँ। भाई रावण! जो काल सारी दुनियाको निगल जाता है, वह उनसे भयभीत रहता है, वह उनके अधीन रहता है। उनसे वैर करके तुम बच नहीं सकते। तुम जानकीको ले चलो, परम कृपालु भगवान् तुम्हें क्षमा कर देंगे; वे शरणागतके सब अपराध भूल जाते हैं। तुम उनके चरणोंका ध्यान करो और लंकाका निष्कण्टक राज्य भोगो। तुम बड़े कुलीन हो, तुम्हारे पास अतुल सम्पत्ति है, तुम बड़े ही विद्वान् हो और बल भी तुम्हारे पास पर्याप्त है, उन्हें पाकर अभिमान मत करो, ये चार दिनकी चाँदनी है। चलो, भगवान्‌की शरण

होओ। मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, शपथपूर्वक कहता हूँ कि रामसे विमुख होनेपर तुम्हारी कोई रक्षा नहीं कर सकता।' इसलिये—

मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान॥

यद्यपि हनुमान्‌ने बहुत ही हितकर बातें कहीं, परंतु वे रावणको अच्छी नहीं लगीं। उसने खीझकर राक्षसोंको आज्ञा दी कि इसे मार डालो। विभीषणने आपत्ति की कि दूतको मारना अन्याय है। अन्तमें अंग-भंग करना निश्चय रहा और रावणने पूँछ जला देनेकी आज्ञा दी। पूँछमें कपड़े लपेटे जाने लगे। उसे तेलमें भिगोया गया और आग लगा दी गयी। दस-बीस राक्षस उन्हें पकड़कर नगरमें घुमाने लगे, बच्चे ताली पीट-पीटकर हँसने लगे। हनुमान्‌ने लंकाध्वंस करनेका यही अवसर उपयुक्त समझा। उन्होंने अपनी पूँछसे एक झटका लगाया और सारे राक्षस अपने-अपने प्राण बचा कर भाग गये। वे उछलकर एक महलसे दूसरे महलपर जाकर सबको भस्म करने लगे। वायुने सहायता की। अग्निने अपने मित्र वायुके पुत्रके कार्यमें हाथ बँटाया, लंका धह-धह करके जलने लगी। बहुत-से यन्त्र नष्ट कर दिये। धोखा देनेके स्थान भस्म कर दिये। परंतु सोनेकी लंका अबतक जली नहीं। यद्यपि सारे नगरमें हाहाकार मचा हुआ था, सब अपनी-अपनी सामग्री, बाल-बच्चे और स्त्री, वृद्धोंको लेकर अलग भाग रहे थे तथापि लंका जलनेके समय भी चमक रही थी।

कहते हैं कि लंकाकी एक काल-कोठरीमें शनैश्चर देवता कैद थे। हनुमान्‌का पैर उसकी चहारदीवारीपर लगा और वह टूट गयी। शनैश्चरने हनुमान्‌से पूछकर सारी बात जान ली और एक कनखीसे लंकाकी ओर देखा। एक विभीषणका घर छोड़कर सारी लंका जलकर राखकी ढेरी हो गयी। उन्होंने हनुमान्‌को वरदान दिया और बतलाया कि अब लंकाका सत्यानाश निकट है, वे चले गये। शनैश्चर देवताको मुक्त करके हनुमान्‌ने जब देखा कि सारी लंका ध्वस्त हो गयी, इसके बीहड़ मोर्चोंमें अब कोई खतरनाक बात न रही, तब वे समुद्रमें कूद पड़े और स्नान करके फिर माँ सीताके पास आये। माँ सीताने भगवान्‌के लिये उन्हें चूड़ामणि दिया

और शीघ्र-से-शीघ्र अपने उद्धारकी प्रार्थना करनेके लिये कहा। उन्हें प्रणाम करके घोर गर्जना करते हुए हनुमान्ने यात्रा की।

जाम्बवान्, अंगद आदि बिना कुछ खाये-पीये एक पैरसे खड़े रहकर हनुमान्की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनकी किलकारी सुनते ही सबने कार्यसिद्धिका अनुमान कर लिया और आगे बढ़कर उन्हें गलेसे लगाया! खाते-पीते, मधुवन उजाड़ते हुए सब भगवान् रामके पास पहुँचे। हनुमान्ने बड़े ही करुण शब्दोंमें सीताकी दशाका वर्णन किया। लंकाके ऐश्वर्य, रावणकी शक्ति और वहाँकी एक-एक बात उन्होंने भगवान्से बतायी। भगवान्ने कहा—'हनुमान्! तुम्हारे समान उपकारी संसारमें और कोई नहीं है। मैं तुम्हें क्या बदला दूँ, मैं तुम्हारा ऋणी हूँ, तुम्हारे सामने मुझसे देखा नहीं जाता।' भगवान्की यह बात सुनते ही हनुमान् व्याकुल होकर उनके चरणोंपर गिर पड़े और प्रेममग्न हो गये। भगवान् रामने बलात् उन्हें उठाकर हृदयसे लगाया और उन्हें अपनी अनन्य भक्तिका वरदान दिया। भगवान् शंकरकी अभिलाषा पूर्ण हुई जिसके लिये वे हनुमान् बने थे, वह कार्य पूरा हुआ।

❑ ❑

(३)

हनुमान्के जीवनमें यह विशेषता है कि जो इनके सम्पर्कमें आया, उसे इन्होंने किसी-न-किसी प्रकार भगवान्की 'सन्निधिमें पहुँचा ही दिया। लंकामें विभीषण इनसे मिले, इनके संसर्ग और आलापसे वे इतने प्रभावित हुए कि रावणकी भरी सभामें उन्होंने हनुमान्का पक्ष लिया और अन्तमें रावणको छोड़कर वे रामकी शरण आ गये। उस समय जब सुग्रीवके विरोध करनेपर भी भगवान्ने शरणागतरक्षाके प्रणकी घोषणा की, तब इन्हें कितना आनन्द हुआ, यह कहा नहीं जा सकता। अंगदको साथ लेकर सबसे पहले हनुमान् उमंगभरी छलाँग मारकर विभीषणके पास चले गये और उन्हें भगवान्के पास ले आये। उनका एकमात्र काम है भगवान्की सेवा, भगवान्की शरणमें जानेवालोंकी सहायता।

समुद्र-बन्धन हुआ, उसमें हनुमान् कितने पहाड़ ले आये, उसकी

गिनती नहीं की जा सकती। सेतु पूरा होते-होते भी ये उत्तरकी सीमासे एक पहाड़ लिये आ रहे थे। इन्द्रप्रस्थसे कुछ दूर चलनेके बाद उन्हें मालूम हुआ कि सेतु-बन्धनका कार्य पूरा हो गया। उन्होंने सोचा कि अब इस पहाड़को ले चलकर क्या होगा, वहीं रख दिया, परंतु वह पहाड़ भी साधारण पहाड़ नहीं था, उसकी आत्माने प्रकट होकर हनुमान्से कहा— 'भक्तराज! मैंने कौन-सा अपराध किया है कि आपके करकमलोंका स्पर्श प्राप्त करके भी मैं भगवान्की सेवासे वंचित हो रहा हूँ। मुझे यहाँ मत छोड़ो, वहाँ ले चलकर भगवान्के चरणोंमें रख दो, पृथ्वीपर स्थान न हो तो समुद्रमें डुबा दो, भगवान्के काम आऊँ तो जीवित रहना अच्छा, नहीं तो इस जीवनसे क्या लाभ है?'

हनुमान्ने कहा—'गिरिराज! तुम वास्तवमें गिरिराज हो। तुम्हारी यह अचल निष्ठा देखकर मेरे मनमें आता है कि मैं तुम्हें ले चलूँ; परंतु भगवान्की ओरसे घोषणा की जा चुकी है कि अब कोई पर्वत न लावे। मैं विवश हूँ। परंतु मैं तुम्हारे लिये भगवान्से प्रार्थना करूँगा, जैसा वे आज्ञा देंगे, वैसा मैं तुमसे कह दूँगा।'

हनुमान् भगवान्के पास गये। उन्होंने उसकी सचाई और प्रार्थना भगवान्के सामने निवेदन की। भगवान्ने कहा—'वह पर्वत तो मेरा परम प्रेमपात्र है। उसका तुमने उद्धार किया है। जाकर उससे कह दो कि द्वापरमें मैं कृष्णरूपमें अवतार लेकर उसे अपने काममें लाऊँगा और सात दिनोंतक अपनी अँगुलीपर रखकर व्रजजनोंकी रक्षा करूँगा। हनुमान्ने व्रजभूमिमें जाकर गोवर्धनसे भगवान्का संदेश कहा। हनुमान्की कृपासे गोवर्धनगिरि भगवान्का परम कृपापात्र बन गया। भगवान्की नित्यलीलाका परिकर हो गया।

× × × ×

सुबेल पर्वतपर भगवान् पर्णशय्यापर लेटे हुए थे। सुग्रीवकी गोदमें उनका सिर था, अंगद-हनुमान् चरण दबा रहे थे, धनुष और तूणीर अगल-बगल रखे हुए थे, लक्ष्मण पीछेकी ओर वीरासनसे बैठकर भगवान्को देख रहे थे, भगवान् अपने हाथमें बाण लेकर सहला रहे थे। भगवान्ने चन्द्रमाकी ओर देखकर पूछा—'भाई! अपनी-अपनी

बुद्धिके अनुसार तुमलोग बताओ कि यह चन्द्रमामें श्यामता कैसी है?' सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदिने अपने-अपने भावके अनुसार उसके कारण बतलाये। सबके पीछे हनुमान्ने कहा—'प्रभो! चन्द्रमा आपका सेवक है। आपका भी उसपर अनन्त प्रेम हैं। वह आपको अपने हृदयमें रखता है और आप उसके हृदयमें रहते है। बस, आप ही चन्द्रमाके हृदयमें श्यामसुन्दररूपसे दीख रहे हैं।' भगवान् हँसने लगे, सबको बड़ी प्रसन्नता हुई।

कह हनुमंत सुनहु प्रभु ससि तुम्हार प्रिय दास।
तव मूरति बिधु उर बसति सोइ स्यामता अभास॥

हनुमान्को तो सर्वत्र भगवान्के दर्शन होते थे। चन्द्रमामें उन्होंने भगवान्के दर्शन किये तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?

राम और रावणका भयंकर युद्ध हुआ। हनुमान्ने उसमें कितने राक्षसोंका वध किया, यह रामायण-प्रेमियोंसे छिपा नहीं है। समय-समयपर युद्धमें उन्होंने राम, लक्ष्मण, विभीषण, जाम्बवान्—सभीकी सहायता की। मेघनादसे युद्ध करते समय लक्ष्मणको बड़ी ही भयंकर शक्ति लग गयी। वे रणभूमिमें ही मूर्च्छित हो गये। मेघनाद और उसके समान अनेक सैनिकोंने मिलकर चेष्टा की कि लक्ष्मणको उठा ले चलें, परंतु वे सफल न हुए, लक्ष्मणको जमीनपरसे उठा न सके। हनुमान्ने उन्हें अनायास ही उठा लिया और रामके पास ले लाये। उन्हें मूर्च्छित अवस्थामें देखकर राम शोकाकुल हो गये। जाम्बवान्ने बतलाया कि लंकामें एक सुषेण नामके वैद्य रहते हैं। यदि वे इस समय आ जायँ तो लक्ष्मण स्वस्थ हो सकते हैं।

हनुमान्ने लंकाकी यात्रा कर दी। उन्होंने सोचा कि शत्रुपक्षका वैद्य है, शायद रात्रिमें न आवे। इसलिये उसका मकान ही उखाड़ ले चलें, ऐसा ही किया। सुषेणने राम-सेनामें आकर लक्ष्मणको देखा और बतलाया कि द्रोणाचलसे यदि आज रातभरमें ओषधियाँ आ जायँ तो लक्ष्मण जीवित हो सकते हैं। हनुमान्ने भगवान्का स्मरण करते हुए द्रोणाचलकी यात्रा की। यह समाचार रावणको मिल गया था। उसने

कालनेमि नामक दैत्यसे मिलकर ऐसा षड्यन्त्र रचा कि हनुमान्‌को मार्गमें ही अधिक समय लग जाय और वे कल सूर्योदयके पहले यहाँ न लौट सकें। कालनेमिने ऋषिका वेष बनाकर हनुमान्‌को भुलावेमें रखना चाहा; परंतु मायापतिके दूतपर किसकी माया चल सकती है! दैवयोगसे हनुमान्‌को पता चल गया और उन्होंने उस बनावटी ऋषिराजको मृत्युकी गुरु-दक्षिणा देकर आगेकी यात्रा की।

हनुमान् द्रोणाचलपर पहुँच गये। रातका समय था। वे ओषधियोंको नहीं पहचान सके। शायद ओषधियोंने अपनेको छिपा लिया। हनुमान् विलम्ब करना तो जानते ही नहीं थे, रातोरात ही उन्हें लंका पहुँचना था। उन्होंने समूचा द्रोणाचल ही उखाड़ लिया और लेकर चलते बने। लौटते समय अयोध्या उनके मार्गमें पड़ती थी। भरतने दूरसे ही देखकर अनुमान किया कि यह कोई राक्षस है। उन्होंने एक हलका-सा बाण चला दिया। बाण लगते ही 'राम-राम' कहते हुए हनुमान् मूर्च्छित होकर गिर पड़े। उनके मुँहसे 'राम-राम' सुनकर भरत उनके पास दौड़ गये और बड़ी चेष्टा करके उन्हें जगाने लगे। अन्तमें उन्होंने कहा—'यदि मेरे हृदयमें रामकी सच्ची भक्ति हो तो यह वानर अभी जीवित हो जाय।' हनुमान् उठकर बैठ गये। हनुमान्‌ने सारी कथा सुनायी। भरतने पछताकर अपनी बड़ी निन्दा की और हनुमान्‌को बाणपर बैठकर जानेके लिये कहा। हनुमान्‌ने बड़ी नम्रतासे अस्वीकार किया और वे द्रोणाचल लेकर लंका पहुँच आये। उस समय श्रीराम बहुत ही व्याकुल हो रहे थे। हनुमान्‌के आते ही उन्होंने उन्हें हृदयसे लगा लिया, सुषेणने उपचार किया और लक्ष्मण स्वस्थ हो गये। चारों ओर हनुमान्‌की कीर्ति गायी जाने लगी। सुषेणको उनके घरसहित हनुमान् यथास्थान रख आये।

रातका समय था, हनुमान् पहरा दे रहे थे। अहिरावण विभीषणका वेष धारण करके आया। हनुमान्‌ने उसे बुलाया और पूछा कि 'भाई! इतनी रातको कहाँसे आ रहे हो? उसने कहा—'भगवान्‌की आज्ञासे संध्या करने गया था, आनेमें देर हो गयी, उन्होंने मुझे शीघ्र ही बुलाया है।' सबके सो जानेपर अहिरावण राम और लक्ष्मणको अपने कंधोंपर

उठाकर ले भागा। भगवान्‌को भला कोई क्या हर ले जा सकता है? लक्ष्मण तो कभी सोते ही नहीं थे; परंतु जब प्रभुको अपने भक्तकी महिमा प्रकट करनी होती है, तो वे साधारण मनुष्योंकी भाँति ही लीला करते हैं। आज हनुमान्‌की महिमा प्रकट करनी थी, वे चुपचाप अहिरावणके कंधेपर चले गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल सारी सेनामें बड़ा कोलाहल मचा। सुग्रीव, जाम्बवान्, विभीषण सब-के-सब व्याकुल थे। हनुमान्‌ने वह घटना सुनायी। विभीषणने कहा—'यह अहिरावणकी माया है, मेरा वेष और कोई नहीं बना सकता।' हनुमान्‌ने कहा—'वह चाहे जितना बली हो, चाहे जितने गुप्त स्थानमें रहता हो, मैं उसके पास जाऊँगा और उसका वध करके अपने प्रभुको ले आऊँगा।' हनुमान्‌ने यात्रा की। दैवयोगसे मार्गमें, कुछ ऐसी घटना घटी कि अहिरावण उन्हें नागलोकमें ले गया है, यह बात निश्चितरूपसे मालूम हो गयी। वहाँ जाकर हनुमान्‌ने महलमें प्रवेश करनेकी चेष्टा की; परंतु मकरध्वजने रोक दिया। उसने कहा—'तुम कौन हो जी! जानते नहीं, मैं महावीर हनुमान्‌का पुत्र हूँ। चोरीसे जाना चाहोगे तो मैं तुम्हें लोहेके चने चबवा दूँगा।' यह सुनकर हनुमान् चकित हो गये। उन्होंने कहा—'भैया! मेरा पुत्र तो कोई है नहीं, तुम कहाँसे टपक पड़े।' मकरध्वजने कहा—'जब आप लंका जलाकर समुद्रमें स्नान कर रहे थे, तब एक मछली आपका पसीना पी गयी थी। उसके गर्भसे मैं पैदा हुआ हूँ।' हनुमान्‌ने उससे राम-लक्ष्मणका पता पूछा। उसने कहा—'मैं यह तो कुछ जानता नहीं, आज मेरे स्वामी किसीकी बलि दे रहे हैं। वहाँ किसीको जानेकी आज्ञा नहीं है। मैं आपको भी नहीं जाने दूँगा।'

युद्ध हुआ; एक-से-बढ़कर-एक, बड़े बापका बेटा बड़ा! अन्तमें हनुमान्‌ने उसे उसकी ही पूँछसे बाँध दिया और घुस गये मन्दिरमें। उनके चरणोंका स्पर्श होते ही देवी जमीनमें धँस गयीं और वे मुँह बाकर देवीके स्थानपर खड़े हो गये। राक्षसोंने समझा कि देवी प्रसन्न होकर प्रकट हुई हैं, खूब पूजा की गयी, आजकी देवीजी जो कुछ फूल, माला, अन्न,

वस्त्र आता, उसे मुँहमें ही रखने लगीं। बलिदानके समयपर राम और लक्ष्मण लाये गये। उस समय राक्षस उनसे अनेकों प्रकारके विनोद करते, उन्हें भाँति-भाँतिसे तंग करते। वे चुपचाप सहते, चूँतक भी नहीं करते। अहिरावणने कहा—'अब तुमलोग अपने रक्षकका स्मरण करो!' भगवान्ने हँसकर कहा—'देखो, तुम्हारी देवी तुम्हें ही न खा जायँ।' वह इनपर तलवार चलानेवाला ही था कि हनुमान् गर्जना करके भगवान्के पास पहुँच गये और इन्हें अपने दोनों कंधोंपर बैठाकर उन्होंने अहिरावणके हाथसे खड्ग छीन लिया। अहिरावण और राक्षसोंका संहार करके हनुमान् भगवान्को शिविरपर ले आये। चारों ओर आनन्दकी ध्वनि और कोलाहल होने लगा। हनुमान्के जय-जयकारसे दिशाएँ गूँज उठीं।

हनुमान् निरन्तर रामके काममें ही लगे रहते। अब भी लगे ही रहते हैं, परंतु यह बात युद्धके समयकी है। दिनभर कभी भगवान्के पास और कभी उनसे दूर रहकर युद्ध किया करते और रातमें भगवान्के चरण दबाते। उनसे धर्मकी, प्रेमकी, ज्ञानकी बातें सुनते। कभी-कभी क्या प्रायः ही भगवान् उनके शरीरपर अपने कर-कमल फेर देते और उनकी सब थकावट मिट जाती। जब भगवान् राम सो जाते तब वे अपने लंबे लंगूरकी चहारदीवारी बनाकर दरवाजेपर बैठ जाते और रातभर पहरा देते तथा पुनः प्रातःकाल होते-न-होते युद्ध। कोई कठिन काम आ पड़ता तो जाम्बवान्, सुग्रीव, अंगद—सभी हनुमान्की शरण लेते।

रावणसे युद्ध करते समय हनुमान्ने उसको एक ऐसा घूँसा जमाया कि वह मूर्च्छित हो गया। उसने होशमें आकर हनुमान्की भूरि-भूरि प्रशंसा की और स्वीकार किया कि जीवनभरमें ऐसे वीरसे कभी मेरा पाला नहीं पड़ा था। बात यह थी कि रावणके प्रहारसे लक्ष्मण मूर्च्छित हो गये थे। अपने पुत्र मेघनादकी भाँति रावणने भी चाहा था कि मैं इन्हें उठा ले चलूँ। उसने सारी शक्ति लगा दी, पर लक्ष्मण न उठे, न उठे। यह देखकर हनुमान् दौड़े, रावणके बाणोंसे सारा शरीर छिद जानेपर भी वे लक्ष्मणके पास पहुँच गये और रावणको एक घूँसा जमाया। वे लक्ष्मणको फूलके समान उठाकर रामके पास ले आये। रामने हनुमान्का आलिंगन करते

हुए कहा—'भैया! तुम तो कालके भी महाकाल हो। देवताओंकी रक्षाके लिये अवतीर्ण हुए हो, फिर मूर्च्छा कैसी?' रामकी बात सुनते ही लक्ष्मण उठ बैठे और फिर दूने उत्साहसे रणभूमिमें गये। हनुमान्‌के सत्साहससे इतना बड़ा संकट क्षणभरमें टल गया।

× × × ×

राम विजयी हुए। अब सीताके पास विजयका संदेश लेकर कौन जाय! भगवान्‌ने हनुमान्‌को बुलाकर कहा—'हनुमान्! सीता तुमसे बड़ा स्नेह रखती हैं। अब यह विजय-समाचार सुनानेके लिये तुम्हीं उनके पास जाओ। महाराज विभीषणसे आज्ञा लेकर लंकामें प्रवेश करना और मेरी, सुग्रीव और लक्ष्मणकी कुशल कहना तथा रावणके वधकी बात भी कहना। सीता जैसे प्रसन्न हों, वैसी ही बात उनसे कहना!' हनुमान्‌ने लंकामें प्रवेश किया। लंकावासी राक्षसोंने उनका बड़ा सम्मान किया। विभीषणकी आज्ञा तो प्राप्त थी ही। वे अशोकवनमें अशोकके नीचे बैठी हुई सीताजीके पास पहुँच गये। चरणोंमें साष्टांग दण्डवत् करके उन्होंने सारा वृत्तान्त निवेदन किया। सीता एक क्षणतक कुछ नहीं बोल सकीं, उनका कण्ठ हर्षगद्‌गद हो गया। उनकी आँखोंमें आँसू भर आये। सीताने कहा—'बेटा! मैं यह हर्षका समाचार सुनकर कुछ बोल न सकी, इसे अन्यथा मत समझना। इससे बढ़कर मेरे लिये सुखद संवाद और कोई हो ही नहीं सकता। मैं सोच रही हूँ कि इसके बदले तुम्हें क्या दूँ? क्योंकि आनन्दकी बात सुनानेवालोंको कुछ-न-कुछ देनेकी प्रथा है। परंतु यदि मैं तुम्हें त्रिलोकीकी सम्पूर्ण सम्पत्ति, समस्त ऐश्वर्य दे दूँ, तो भी मुझे संतोष नहीं होगा। तुम्हारे हृदयमें सर्वदा भगवान्‌की अनन्य भक्ति बनी रहे और मैं तुम्हारी रिनियाँ ही रहूँ। सब सद्‌गुणोंका तुम्हारे मनमें निवास हो और रघुनाथजीकी तुमपर सदा कृपा बनी रहे।

हनुमान्‌ने अंजलि बाँधकर कहा—'माता! तुम्हारे अतिरिक्त और कौन है, जो ऐसी स्नेहपूर्ण बात कहे! मेरे हृदयमें युगल सरकारकी स्मृति बनी रहे,मैं उनके कर-कमलोंकी छत्रछायामें रहूँ, इससे बढ़कर और है ही क्या, जो आप मुझे देंगी। आप आज्ञा करें कि मैं आपकी क्या सेवा करूँ?'

सीताजीने कहा—'मैं भगवान्‌के दर्शनके लिये बहुत ही उत्सुक हूँ। अब एक क्षणका भी विलम्ब नहीं सहा जाता।' हनुमान्‌ने तुरंत वहाँसे यात्रा की और भगवान्‌के पास पहुँच आये। उन्होंने सीताकी प्रसन्नता, उनकी दर्शनोत्कण्ठा और प्रार्थना भगवान्‌को सुनायी। भगवान्‌ने विभीषणको आज्ञा दी कि 'सीताको ले आओ।'

× × × ×

भगवान् राम, सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण आदिके साथ पुष्पकविमानपर चढ़कर अयोध्याके लिये लौटे। प्रयागमें उन्होंने हनुमान्‌को बुलाकर कहा—'हनुमान्! तुम अयोध्यामें जाकर देखो कि भरत क्या कर रहे हैं। मेरे वियोगमें उन्हें एक-एक क्षण भी कल्पके समान जान पड़ता होगा। उन्हें मेरा समाचार सुनाना और उनका समाचार लेकर शीघ्र ही मेरे पास आ जाना।' हनुमान्‌ने प्रस्थान किया।

अयोध्यामें भगवान्‌के लिये भरत कितने व्याकुल हो रहे थे, इसका अनुमान कोई भी नहीं कर सकता। हनुमान्‌ने उनकी दशा देखी, वे जटाका मुकुट बाँधे कुशके आसनपर बैठे हुए थे, उनका शरीर सूखकर काँटा हो गया था, आँखोंसे आँसू बह रहे थे और मुँहसे निरन्तर रामनामका उच्चारण हो रहा था। वे इतने तन्मय थे कि उन्हें पता भी नहीं चला कि यहाँ कोई आया हुआ है। हनुमान्‌ने स्वयं ही उनका ध्यान भंग करते हुए कहा—'जिनके विरहमें आप दुःखी हो रहे हैं, जिनके नाम और गुणोंकी रटना कर रहे हैं, वे ही देवता और मुनियोंके रक्षक भगवान् राम माँ जानकी तथा लक्ष्मणके साथ सकुशल आ रहे हैं।' हनुमान्‌के वचन सुनते ही भरतके शरीरमें नवीन प्राणोंका संचार हो गया। उनका रोम-रोम, उनका रग-रग अमृतसे सराबोर हो गया। उन्होंने झट उठकर हनुमान्‌को अपने गलेसे लगा लिया। परिचय जाननेपर तो उनके आनन्दकी सीमा न रही। उन्होंने बार-बार भगवान् रामकी बातें पूछीं और हनुमान्‌ने भी कई बार कहीं। दोनोंको अनन्त आनन्दका अनुभव हो रहा था।

भरतने कहा—'भाई! तुम्हें मैं क्या दूँ, इसके बदलेमें देनेयोग्य और कौन-सी वस्तु है? तुम्हारा ऋणी रहनेमें ही मुझे प्रसन्नता है।' हनुमान् उनके

चरणोंपर गिर पड़े और उनके प्रेमकी भूरि-भूरि प्रशंसा करके बतलाया कि 'भगवान् राम प्रायः ही आपकी चर्चा किया करते हैं। आपके सद्‌गुणोंका बखान किया करते हैं। आपका नाम जपा करते हैं। भरतसे अनुमति लेकर हनुमान् वहाँसे बिदा हुए।

× × × ×

भगवान्‌का राज्याभिषेक हुआ। सभीको उपहार दिये गये। स्वयं भगवान् रामने अपने हाथों सुग्रीव, विभीषण आदिको बहुत-से बहुमूल्य मणि, रत्न, वस्त्र, आभूषण आदि दिये। परंतु उन्होंने न जाने क्या सोचकर हनुमान्‌को कुछ नहीं दिया। सभी सभासद सोच रहे थे कि भगवान्‌ने हनुमान्‌को क्यों भुला दिया। भगवान् सब समझ-बूझकर भी चुप थे। माता सीता भगवान्‌की लीलाका रहस्य समझ रही थीं, परंतु औरोंपर हनुमान्‌का महत्त्व प्रकट करनेके लिये उन्होंने एक दूसरी ही लीला रची। अपने कण्ठसे बहुमूल्य मणियोंका हार निकालकर उन्होंने हनुमान्‌को पहना दिया। सब लोग माताकी प्रशंसा करने लगे। हनुमान्‌ने भी बड़े प्रेमसे उसे स्वीकार किया। परंतु यह क्या? दूसरे ही क्षण सब लोग चकित होकर हनुमान्‌की ओर देखने लगे। बात यह थी कि हनुमान् मणिका एक दाना उठाते और उसे तोड़ डालते। बड़े गौरसे देखते और उसे फेंक देते। यह काम लगातार चल रहा था। न जाने कितने दाने तोड़े और फेंक दिये।

भगवान् राम मुसकरा रहे थे। सीता कुछ गम्भीर-सी हो गयी थीं। भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण चकित-से देख रहे थे, परंतु सभासदोंसे नहीं रहा गया। उन्होंने कहा—'हनुमान्! तुम यह क्या कर रहे हो? इन बहुमूल्य मणियोंको इस प्रकार मिट्टीमें न मिलाओ।' किसीने दबी जबानसे कहा—'आखिर हैं तो वानर ही न! इन्हें मणियोंके मूल्यका क्या पता।' बहुतोंको नाराज होते देखकर हनुमान्‌ने कहा—'भाई! आप लोग क्यों नाराज हो रहे हैं? मैं तो इन मणियोंका महत्त्व परख रहा हूँ। इनमें बड़ी चमक है। ये बहुत दामपर बिक सकती हैं। सम्भव है, इन्हें दामसे कोई खरीद भी न सके, इन्हें पहननेसे सौन्दर्य भी बढ़ सकता है; परंतु क्या ये सब बातें ही महत्त्वकी द्योतक हैं? नहीं-नहीं। मैंने महत्त्वकी कसौटी जो कुछ समझी है, वह यह है कि जिस

वस्तुके हृदयमें भगवान्के दर्शन होते हैं, वही वस्तु महत्त्वपूर्ण है। मैं ढूँढ़ रहा था कि इन मणियोंके हृदयमें भगवान् दीखते हैं या नहीं? मुझे नहीं दीखे। इनकी यह चमक-दमक मुझे अन्धकारमयी मालूम हुई। इनसे मेरा क्या प्रयोजन? ये मेरे किस कामकी? इन्हें एक-न-एक दिन टूटना ही है, छूटना ही है, मैंने इन्हें तोड़ दिया, छोड़ दिया।'

हनुमान्की बात सुनकर बहुतोंको तो मणियोंको तोड़नेका रहस्य समझमें आ गया, परंतु कुछ ऐसे भी थे, जिनके मनमें शंका बनी हुई थी। उन्होंने पूछा—'तो क्या तुम्हारे हृदयमें राम हैं? यदि हैं तो दिखाओ और नहीं हैं तो तुमने हृदयका भार क्यों ढो रखा है? हनुमान्ने कहा—'निश्चय ही मेरे हृदयमें भगवान् हैं—वैसे ही हैं, जैसे तुम सामने देख रहे हो।' उन्होंने दोनों हाथ छातीपर लगाये, हृदय चीरकर दिखा दिया कि भगवान् राम माता जानकी और भाइयोंके साथ उनके हृदयसिंहासनपर विराजमान हैं। सब लोग हनुमान्की महिमा गाने लगे। भगवान्ने सिंहासनसे उठकर हनुमान्का आलिंगन किया और उनके शरीरका स्पर्श होते ही हनुमान्का वक्षःस्थल पहलेसे भी अधिक दृढ़ हो गया। भगवान्ने हनुमान्को उपहार क्यों नहीं दिया, इसका रहस्य अब सबकी समझमें आ गया। माता सीता मन्द-मन्द मुसकराने लगीं।

× × × ×

हनुमान्-जैसा पुत्र और सीता-जैसी माता! फिर दोनोंके स्नेहका क्या कहना! हजारों दास-दासियाँ थीं सीताकी सेवा करनेके लिये, उनके इशारेसे ही जो चाहतीं हो जाता; परंतु इतनेसे उन्हें तृप्ति नहीं होती। उन्होंने अपने लाडले लाल हनुमान्को अपने हाथों रसोई बनाकर खिलानेकी सोचीं। अनेकों प्रकारके व्यंजन बनाये। हनुमान् भोजन करने बैठे। माताके हाथकी रसोई कितनी मीठी होती है। हनुमान् खाने लगे। उन्हें पता ही नहीं था कि मैं कितना खा गया। सारी रसोई खतम होनेपर आयी, परंतु अभी हनुमान् भोजनसे विरत नहीं हुए। माता सीता हनुमान्के इस कृत्यसे चकित हो गयीं। उन्होंने निरुपाय होकर भगवान् रामका स्मरण किया। सीताने देखा कि हनुमान्के वेशमें स्वयं शंकर ही भोजन कर रहे हैं।

प्रलयके समय सारे संसारको निगल जानेवाले महाकालके भी काल हनुमान्का पेट कुछ व्यंजनोंसे कैसे भर सकता है? उन्होंने एक प्रकारसे हनुमान्की स्तुति की, किंतु की मर्यादापूर्वक। उन्होंने हनुमान्के पिछले भागमें जाकर उनके सिरपर लिख दिया—'ॐ नमः शिवाय' और तब फिर भोजनकी सामग्री दी। अबकी बार हनुमान् तृप्त हो गये। इस प्रकार स्वयं माँ सीताने हनुमान्को शिवरूपसे स्वीकार किया।

× × × ×

भगवान् रामकी सभी सेवाएँ हनुमान् ही करते, वे अपने काममें इतने सावधान रहते कि दूसरोंको अवसर ही नहीं मिलता। भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण भी भगवान्की सेवाके लिये ललकते ही रह जाते। अन्तमें उन लोगोंने एक उपाय सोचा। वह यह कि एक ऐसी दिनचर्या बनायी जाय, जिसमें भगवान्की सब सेवाओंका विभाजन हो और हमलोग अपना-अपना समय तथा काम निश्चित कर लें। हनुमान्के लिये उसमें कोई स्थान न रखा जाय। योजना बनी और सर्वसम्मतिसे पास हो गयी। माता सीताके द्वारा वह भगवान् रामके सामने उपस्थित की गयी। उसे देखकर भगवान् मुसकराये। उन्होंने हनुमान्को दिखाकर पूछा—'कहो हनुमान्! तुम इस योजनाको पसंद करते हो?' हनुमान्ने कहा—'भगवन्! सबकी सम्मति और माताजीकी सिफारिश है तो आप इसे स्वीकार कर लें, जो सेवाकार्य इसमें न हो वह मेरा रहा।' भगवान्ने और लोगोंसे कहा—'भाई! खूब सोच-समझकर देख लो।' सबने देखा, कोई काम छूटा नहीं था। सबने हनुमान्जीकी बात मान ली। वह योजना सरकारसे मंजूर हो गयी।

हनुमान्ने बताया—'भगवन्! दरबारकी यह प्रथा है कि जब महाराज जँभाई लेने लगें, तब चुटकी बजायी जाय। सो यह काम मेरा रहा। सबने इसे साधारण काम समझा और भगवान्ने भी हँसकर उन्हें स्वीकृति दे दी। हनुमान्को सेवाके सम्बन्धमें कितना सूक्ष्म ज्ञान है, भरत यह देखकर अवाक् हो गये।

अब हनुमान्की बन आयी। भगवान्के चलते-फिरते, खाते-सोते सर्वदा उनके साथ रहने लगे। जब भगवान् कहीं चलते, तब हनुमान्

आगे-आगे पीछेकी ओर मुँह करके चलते। जब भगवान् सोते, तब ये थोड़ी दूरपर खड़े रहकर भगवान्का मुखचन्द्र निहारते रहते। किसी-किसीने आपत्ति भी की थी, परंतु हनुमान्ने उसे यह कहकर निरुत्तर कर दिया कि प्रभुको न जाने कब जँभाई आ जाय। माता सीताको भी भगवान्की सेवामें असुविधा होने लगी। लक्ष्मण और शत्रुघ्न तो घबरा-से गये। भगवान् राम खूब हँसते थे। अन्ततः महारानी सीताके कहनेपर भगवान्ने नयी योजना बदल दी और फिर हनुमान् पहलेकी भाँति निरन्तर सेवा करने लगे।

× × × ×

भरत, शत्रुघ्न आदि सभीकी ऐसी धारणा थी और यह बात सच भी थी कि भगवान् राम सबसे अधिक हनुमान्पर ही स्नेह करते हैं। जब उन्हें कोई बात भगवान्से पूछनी होती, तब वे हनुमान्के द्वारा ही पुछवाते। हनुमान् स्वयं भी भगवान्से और माता सीतासे अनेकों प्रकारके प्रश्न पूछते और जीव, शिव आदिके सम्बन्धमें तत्त्वज्ञान प्राप्त करते। भगवान् रामने कई बार उन्हें तत्त्वज्ञानका उपदेश किया था और वेदान्तका सम्पूर्ण रहस्य समझाया था। अध्यात्मरामायणके प्राथमिक प्रसंग ऐसे ही हैं। ब्रह्माण्डपुराणमें भी यह कथा आयी है कि भगवान्ने श्रीकृष्णावतारमें जो उपदेश अर्जुन और उद्धवको किये हैं, वे ही उपदेश श्रीरामावतारमें आंजनेय श्रीहनुमान्जीको किये हैं। हनुमान् ज्ञानकी मूर्ति थे, इस बातका प्रमाण कई प्रसंगोंसे मिलता है। शिव ही जो ठहरे। उनके लिये यह आश्चर्यकी कौन-सी बात है!

कभी-कभी हनुमान्को बहुत सेवा करते देखकर भगवान् कहते कि 'हनुमान्! तुम तो मेरे स्वरूप ही हो, तुम्हें इतनी सेवा करनेकी क्या आवश्यकता है? तुम तो केवल मस्त रहा करो।' हनुमान् कहते—'प्रभो! आपका कहना सत्य है, किंतु सेवा करनेसे क्या मैं आपका स्वरूप नहीं रहता? क्या सेवाके समय मैं मस्त नहीं रहता? शरीरदृष्टिसे मैं आपका सेवक हूँ। शरीर सर्वदा आपकी और आपके भक्तोंकी सेवामें लगी रहे, इसका यही उपयोग है। जीव-दृष्टिसे मैं आपका अंश हूँ। मैं आपकी संनिधिमें रहूँ, आपसे विलग न होऊँ, यह सर्वथा वांछनीय है। तत्त्वदृष्टिसे

तो मैं आपका स्वरूप ही हूँ। उस दृष्टिसे क्या कहना, क्या सुनना है?* भगवान् हनुमान्‌की ऐसी बातें सुनकर बहुत ही प्रसन्न होते।

× × × ×

भगवान् रामके अश्वमेध-यज्ञका घोड़ा छोड़ा गया। शत्रुघ्न, पुष्कल, लक्ष्मीनिधि आदि बड़े-बड़े वीर उसकी रक्षाके लिये नियुक्त हुए, हनुमान् भी उनके साथ थे। अनेकों स्थानोंपर बड़े-बड़े युद्ध हुए, हनुमान्‌ने उनमें कितनी तत्परता दिखायी, कितनी वीरतासे युद्ध किया, यह बात तो पद्मपुराणके पातालखण्डका वह अंश पढ़नेपर ही जानी जा सकती है। यहाँ केवल कुछ घटनाओंका दिग्दर्शनमात्र कराया जाता है।

चक्रांका नगरीके राजा सुबाहुसे युद्ध हो रहा था। बहुत-से वीर मारे गये, अनेकों घायल हुए, अन्तिम युद्ध सुबाहु और हनुमान्‌का हो रहा था। हनुमान्‌की एक लात सुबाहुकी छातीपर लगी और वे बेहोश हो गये। मूर्च्छामें सुबाहुने देखा कि मैं अयोध्यामें हूँ। भगवान् राम सरयूके किनारे यज्ञ कर रहे हैं और कोटि-कोटि ब्रह्माण्डोंके अधिपति ब्रह्मा आदि उनकी स्तुति कर रहे हैं। नारदादि ऋषिगण वीणा, पखावज आदि बजाकर उनके गुणोंका कीर्तन कर रहे हैं और वे मूर्तिमान् होकर उनके यशका गायन कर रहे हैं। उनकी वह श्यामसुन्दर छवि देखकर सुबाहु मुग्ध हो गये, उसी अवस्थामें बहुत देरतक पड़े रहे।

जब उनकी मूर्च्छा टूटी, तब उनका अज्ञान नष्ट हो चुका था। उन्होंने एक ऋषिके शापकी कथा सुनाकर हनुमान्‌की बड़ी महिमा गायी और बतलाया कि इन्हींकी चरणस्पर्शसे मुझे रामतत्त्वका ज्ञान हुआ है, अब युद्ध बंद कर दो और सब लोग भेंटकी सामग्री लेकर अयोध्या चलें। भगवान् रामके यज्ञमें सेवाकार्य करें। हनुमान् आदिकी पूजा करके वे लोग अयोध्या आये और हनुमान्‌ने यज्ञीय अश्वके साथ आगे प्रस्थान किया।

जब वह घोड़ा देवपुरके शिवभक्त राजा वीरमणिके द्वारा बाँध लिया गया, तब बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। वीरमणिकी भक्तिसे प्रसन्न होकर स्वयं भगवान् शंकरने युद्ध किया और शत्रुघ्न, पुष्कल आदि सभी वीर

---

* देहदृष्ट्या तु दासोऽहं जीवदृष्ट्या त्वदंशकः।
आत्मदृष्ट्या त्वमेवाहमिति मे निश्चिता मतिः॥

मूर्च्छित एवं मृतप्राय हो गये। केवल हनुमान् ही लड़ते रहे। भगवान् शंकरकी ही लीला थी, वे ही अपने भक्त और भगवान् दोनोंकी ओरसे लड़ रहे थे। दोनों ही ओर शंकर, तब भला कौन हारता। हनुमान्ने डाँटते हुए कहा—'मैं तो जानता था कि शंकर रामके भक्त हैं; परंतु तुम्हारी भक्तिका पता लग गया! हमलोग रामका यज्ञ पूर्ण होनेके लिये घोड़ेकी रक्षा करते हैं और तुम उसमें विघ्न डालनेके लिये युद्ध कर रहे हो।' शंकरने कहा—'भाई! बात तो ठीक है। मुझसे भगवान्की भक्ति कहाँ बनती है? परंतु तुम्हारी बातें बड़ी अच्छी लग रही हैं। तुमने मुझे भगवान्का स्मरण तो करा दिया; परंतु मैं क्या करूँ। वीरमणिकी भक्तिसे विवश हूँ। मुझे उसकी ओरसे लड़ना ही पड़ेगा।'

बड़ा घमासान युद्ध हुआ। हनुमान्के प्रहारोंसे शंकरका रथ टूट गया। उनके आयुध निष्फल हो गये। उनका शरीर जर्जर हो गया। नन्दी भागनेका उपक्रम करने लगा। शंकरने हनुमान्को पुकारकर कहा—'वीर! तुम धन्य हो, तुम्हारी भगवद्भक्ति धन्य है। मैं तुम्हारी वीरता और भगवत्परायणता देखकर प्रसन्न हूँ। जो वरदान यज्ञ, तपसे नहीं प्राप्त हो सकते, वह मैं तुम्हें देनेके लिये तैयार हूँ। माँगो, माँगो, तुम्हारी जो इच्छा हो माँग लो!'

हनुमान्ने कहा—'शंकर! भगवान् रामकी कृपासे मुझे किसी वस्तुकी कामना नहीं है, तथापि आज तुम मुझसे युद्धमें प्रसन्न हुए हो, इसलिये मैं तुमसे कुछ काम लूँगा। देखो, युद्धमें पुष्कल मर गये हैं, शत्रुघ्न मूर्च्छित हो गये हैं, सैनिक क्षत-विक्षत होकर रणभूमिमें पड़े हुए हैं, तुम अपने गणोंके साथ इनकी रक्षा करो। मैं ओषधियाँ लानेके लिये द्रोणाचलपर जाता हूँ। यदि देवता विरोध करेंगे तो सम्भव है, वहाँ भी युद्ध करना पड़े, विलम्ब हो जाय; तबतक इन वीरोंका कोई अनिष्ट न होने पावे।' शंकरने स्वीकार किया और हनुमान्ने यात्रा की।

हनुमान्ने क्षीरसागरके पास जाकर द्रोणाचलको अपनी पूँछमें लपेट लिया। वे उसे उखाड़कर वहाँसे चलनेवाले ही थे कि उसके रक्षक देवताओंने उनपर आक्रमण कर दिया; परंतु हनुमान्के सामने उनकी एक न चली, वे घायल होकर भग गये। जब उन्होंने इन्द्रसे जाकर कहा कि

एक वानर द्रोणाचलको लिये जा रहा है और हमारे अस्त्र उसपर काम नहीं करते, तब वे घबराकर अपने कुलगुरु बृहस्पतिके पास गये। बृहस्पतिने हनुमान्‌का पूरा परिचय बताकर उन्हें प्रसन्न करनेकी प्रेरणा की। इन्द्रने कहा—'भगवन्! यदि हनुमान् द्रोणाचलको उखाड़ ले जायँगे तो हमारे देवता तो मर ही जायँगे; क्योंकि वही हमलोगोंका जीवनाधार है। कोई ऐसा उपाय कीजिये कि हनुमान्‌का काम भी बन जाय और हमारी ओषधियाँ भी सुरक्षित रहें।

बृहस्पति इन्द्र और देवताओंको साथ लेकर हनुमान्‌के पास गये। उनसे बहुत रोये-गिड़गिड़ाये, अपने अपराधको क्षमा कराया और उनकी अभिलाषा पूर्ण होनेका वरदान देकर उन्हें मृतसंजीवनी ओषधि दे दी। हनुमान् उसे लेकर रणभूमिमें पहुँचे। चारों ओर हनुमान्‌की जयध्वनि होने लगी। वे ओषधि लेकर पुष्कलके पास पहुँचे। पुष्कल मर चुका था, उन्होंने ओषधिका प्रयोग करते हुए कहा—'यदि मैं मन, वाणी तथा कर्मसे भगवान् रामको ही जानता होऊँ, उन्हींकी आज्ञाका पालन करता होऊँ और मेरी दृष्टिमें उनके अतिरिक्त और कोई वस्तु न हो तो इस ओषधिसे पुष्कल जीवित हो जायँ।'[१] सिर धड़से जोड़ते ही पुष्कल जी उठे और शंकरसे लड़नेके लिये दौड़े।

हनुमान् शत्रुघ्नके पास गये। शत्रुघ्न मूर्च्छामें 'राम-राम', 'रघुनन्दन-रघुनन्दन' आदि बोल रहे थे और कभी-कभी उनकी लीलाओंका प्रलाप भी करते थे। [हनुमान्‌ने ओषधिका प्रयोग करते हुए कहा—]'यदि भगवान्‌की कृपासे मैं नित्य ब्रह्मचारी हूँ और मेरा ब्रह्मचर्य कभी भंग नहीं हुआ है तो शत्रुघ्न अभी जीवित हो जायँ!'[२] शत्रुघ्न उठ बैठे और 'शिव कहाँ हैं, मैं अभी मार डालूँगा', यह कहते हुए युद्धभूमिकी ओर दौड़े। पुनः घमासान युद्ध हुआ, वीरमणि मूर्च्छित हो गये; शंकर और शत्रुघ्न

१- यद्यहं मनसा वाचा कर्मणा राघवं प्रति।
जानामि तर्हि एतेन भेषजेनाशु जीवतु॥

२- यद्यहं ब्रह्मचर्यं च जन्मपर्यन्तमुद्यतः।
पालयामि तदा वीरः शत्रुघ्नो जीवतु क्षणात्॥

लड़ने लगे। जब शंकरके बाणोंसे शत्रुघ्न व्याकुल हो गये, तब हनुमान्‌ने कहा कि 'अब अपने भैयाकी याद करो, तब काम बनेगा।' शत्रुघ्नने वैसा ही किया और भगवान् राम वहाँ उपस्थित हो गये, फिर तो शंकरने बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे उनकी स्तुति की और अपने इस अपराधको अमार्जनीय बतलाकर क्षमा-प्रार्थना की।

भगवान् रामने कहा—'देवाधिदेव महादेव! आपने बड़ा अच्छा काम किया है। यह तो देवताओंका धर्म ही है कि वे अपने भक्तोंकी रक्षा करें, तुम मेरे हृदयमें हो और मैं तुम्हारे हृदयमें हूँ, हम दो थोड़े ही हैं। जो हम दोनोंमें अन्तर देखते हैं, वे नरकोंमें जाते हैं। जो तुम्हारे भक्त हैं, वे ही मेरे भक्त हैं। मेरे भक्त भी अत्यन्त भक्तिपूर्वक तुम्हें नमस्कार करते हैं।* भगवान्‌ने सब मरे हुए और घायल वीरोंका स्पर्श करके उन्हें जीवित किया। राजा वीरमणि अपना सर्वस्व समर्पित करके रामका भक्त हो गया। हनुमान् घोड़ेके साथ आगे बढ़े।

× × × ×

जब भगवान् राम सम्पूर्ण वानर-भालुओंको विदा करने लगे और हनुमान्‌की भी बारी आयी, तब वे भगवान्‌के चरणोंपर गिर पड़े। उन्होंने प्रार्थना की कि 'भगवन्! मैं आपके चरणोंमें ही रहूँगा।' भगवान्‌ने स्वीकृति दे दी। ऐसे भक्तोंको भला भगवान् कब छोड़ते हैं! भगवान्‌की लीलाके संवरणका समय आया, तब भगवान्‌ने हनुमान्‌को बुलाकर कहा—'हनुमान्! अब तो मैं अपने लोकमें जा रहा हूँ; परंतु तुम दुःख मत मानना।

---

* देवानामयमेवास्ति धर्मो भक्तस्य पालनम्।
त्वया साधु कृतं कर्म यद्भक्तो रक्षितोऽधुना॥
ममासि हृदये शर्व भवतो हृदये त्वहम्।
आवयोरन्तरं नास्ति मूढाः पश्यन्ति दुर्धियः॥
ये भेदं विदधत्यद्धा आवयोरेकरूपयोः।
कुम्भीपाकेषु पच्यन्ते नराः कल्पसहस्रकम्॥
ये त्वद्भक्तास्त एवासन्मद्भक्ता धर्मसंयुताः।
मद्भक्ता अपि भूयस्था भक्त्या तव नतिङ्कराः॥

यह अप्रिय कार्य तुम्हें करना पड़ेगा। तुम पृथ्वीमें रहकर शान्तिका, प्रेमका और ज्ञानका प्रचार करो। जब तुम मुझे स्मरण करोगे, तब मैं तुम्हारे सामने प्रकट हो जाऊँगा। जहाँ-जहाँ मेरी कथा हो, मेरा कीर्तन हो, वहाँ-वहाँ तुम उपस्थित रहना, मैं तुमसे अलग थोड़े ही होता हूँ। यह तो केवल मेरी एक लीला है।' हनुमान्‌ने हाथ जोड़कर कहा—'प्रभो! मैं रहूँगा, जहाँ-जहाँ आपकी कथा होगी वहाँ-वहाँ जाकर सुनूँगा। वह ही मेरे जीवनका आलम्बन होगा। भगवान् बहुत ही प्रसन्न हुए! भगवान् रामने एक ऐसे ही प्रसंगपर हनुमान्‌से कहा था—'हनुमान्! इस लोकमें जबतक मेरी कथा रहेगी, तबतक तुम्हारी कीर्ति और तुम्हारा जीवन रहेगा। जबतक जगत् रहेगा, तबतक मेरी कथा रहेगी। तुमने जो बड़े-बड़े मेरे उपकार किये हैं, उनमेंसे एक-एकके बदलेमें मैं अपने प्राण दे दूँ तो भी तुम्हारा बदला नहीं चुका सकता। तुम्हारे उपकारका बदला मैं न दे सकूँ, यही ठीक भी है। तुम्हारे जीवनमें कभी ऐसा अवसर ही न आवे कि तुम्हें प्रत्युपकारकी आवश्यकता हो; क्योंकि मनुष्य विपत्तिमें ही प्रत्युपकारका पात्र होता है।'* भगवान् रामने अपनी लीला संवरण कर ली, परंतु उनके भक्त भगवान् शंकरकी लीला चालू रही—*'राम ते अधिक राम कर दासा।'*

❑ ❑

---

* चरिष्यति कथा यावदेषा लोके च मामिका।
तावत्ते भविता कीर्तिः शरीरेऽप्यसवस्तथा॥
लोका हि यावत्स्थास्यन्ति यावत्स्थास्यति मे कथा।
एकैकस्योपकारस्य प्राणान् दास्यामि ते कपे॥
शेषस्येहोपकाराणां भवाम ऋणिनो वयम्।
मदङ्गे जीर्णतां यातु यत्त्वयोपकृतं कपे॥
नरः प्रत्युपकाराणामापत्स्वायाति पात्रताम्।
....

—वाल्मीकीयरामायण

(४)

भगवान् रामके परमधाम पधारनेके पश्चात् हनुमान्का एकमात्र काम रहा भगवान्के नाम, लीला और गुणोंका कीर्तन एवं श्रवण। जहाँ-जहाँ सत्संग होता, वहीं हनुमान् उपस्थित रहते। आर्ष्टिषेण ऋषिके साथ किंपुरुषवर्षमें रहकर प्रायः ही भगवान्के गुणानुवाद सुना करते। गन्धर्वोंकी स्वरलहरी जब अपने रसमें त्रिभुवनको उन्मत्त किये होती, तब हनुमान् उनके अमृतमय संगीतसे निःसृत भगवान् रामकी लीलाका साक्षात् अनुभव करते होते। युग-पर-युग बीत गये; परंतु एक क्षणके लिये भी उन्हें भगवान्की विस्मृति न हुई। भगवान्के अतिरिक्त और कोई भी उनके सामने न आया।

वैवस्वत मन्वन्तरके अट्ठाईसवें द्वापरमें भगवान् श्रीकृष्णका अवतार हुआ। श्रीकृष्ण और श्रीराम एक ही हैं, दो नहीं। वे भला अपने परमप्रिय भक्त हनुमान्के बिना कैसे रहते? उन्होंने हनुमान्को बुलानेका संकल्प किया; परंतु इसके साथ भी तो कुछ लीला होनी चाहिये, हनुमान्की महत्ता प्रकट होनी चाहिये। अपना कहलानेवालोंमें जो दोष-दुर्गुण आ गये हैं, उन्हें दूर करना चाहिये। भगवान्के संकल्प करते ही हनुमान् द्वारिकाके पास ही एक उपवनमें आ विराजे। भगवन्नामका संकीर्तन करते हुए फल खाने लगे, डालियाँ तोड़ने लगे।

उन दिनों सत्यभामाके लिये भगवान्ने पारिजात हरण किया था। उन्हें गर्व था कि भगवान्का सबसे अधिक प्रेम मुझपर ही है। मैं सबसे सुन्दरी हूँ। उन्होंने बात-ही-बातमें एक दिन कह भी दिया कि क्या सीता मुझसे अधिक सुन्दरी थीं कि उनके लिये आप वन-वन भटकते रहे? भगवान् चुप रहे। चक्रके मनमें भी गर्व था कि मैंने इन्द्रके वज्रको परास्त कर दिया। गरुड़ भी सोचते थे कि मेरी सहायतासे श्रीकृष्णने इन्द्रपर विजय प्राप्त की है। भगवान् श्रीकृष्णने सोचा कि इन तीनोंका गर्व नष्ट होना चाहिये। ये मेरे होकर अभिमानी रहें, यह मुझे सह्य नहीं है। धन्य भगवान्की कृपा!

भगवान्ने गरुड़को बुलाकर आज्ञा की कि गरुड़! द्वारिकाके

उपवनमें एक वानर आया है, उसे पकड़ लाओ। देखो, उसे पकड़नेका तुममें साहस हो तब तो अकेले जाओ, नहीं तो सेना भी साथ ले जाओ।' गरुड़के मनमें यह बात आयी कि एक तो भगवान् साधारण-सा वानर पकड़नेके लिये मुझे भेज रहे हैं, दूसरे सेना भी साथ ले जानेको कहते हैं, यह मेरा कितना बड़ा अपमान है! मैं उस वानरको चूर-चूर कर दूँगा। गरुड़ने अकेले जाकर देखा कि हनुमान् उनकी ओर पीठ करके फल खा रहे हैं और बड़ी मस्तीसे 'राम-राम' का कीर्तन कर रहे हैं। उन्होंने पहले डाँट-फटकारकर हनुमान्को ले चलनेकी चेष्टा की, परंतु हनुमान् टस-से-मस नहीं हुए। जब गरुड़ने उनपर आक्रमण किया तो पहले बहुत देरतक जैसे लोग नन्हीं-नन्हीं चिड़ियोंसे खेला करते हैं, वैसे हनुमान् खेलते रहे; परंतु जब गरुड़ न माने, तब उन्होंने अपनी पूँछमें उन्हें लपेटकर तनिक-सा कस दिया। वे छटपटाने लगे। उन्होंने भगवान् श्रीकृष्णका नाम बताकर कहा कि उनकी आज्ञासे मैं आया हूँ, उन्होंने तुम्हें बुलाया है, वे साक्षात् नारायण हैं, चलो। हनुमान्ने गरुड़को छोड़कर कहा—'भैया! यद्यपि राम और कृष्णमें कोई भेद नहीं है, दोनों एक ही हैं, तथापि मैं तो सीतानाथ श्रीरामका हूँ, मेरे हृदयमें उन्हींका पक्षपात है। मैं श्रीकृष्णके पास क्यों जाऊँ?' हनुमान्ने यह कहकर मानो भगवान्की लीलामें सहयोग दिया।

अभी गरुड़का गर्व टूटा नहीं था। वे सोचते थे कि अगर मैं पकड़ न गया होता तो हनुमान्को बलात् ले चल सकता। उन्होंने दुबारा आक्रमण किया। अभिमान अंधा बना देता है। श्रीकृष्णका दूत समझकर हनुमान्ने उनपर जोरसे आघात नहीं किया, पर हलके हाथसे पकड़कर समुद्रकी ओर फेंक दिया। समुद्रमें गिरनेपर गरुड़को दिग्भ्रम हो गया, बहुत देरतक वहीं छटपटाते रहे। जब उन्होंने भगवान्का स्मरण किया, तब कहीं द्वारिकाका प्रकाश दीख पड़ा और वे श्रीकृष्णके पास आये। सब बात सुनकर श्रीकृष्ण बहुत हँसे। अभी गरुड़के मनमें तेजीसे उड़नेका गर्व बाकी ही था। वे सोचते थे कि

उड़नेमें मेरा मुकाबला वायु भी नहीं कर सकता। भले ही हनुमान् बलमें मुझसे बड़े हों।

भगवान्ने कहा—'गरुड़! इस बार जाकर तुम कहो कि तुम्हारे इष्टदेव भगवान् श्रीराम तुम्हें बुला रहे हैं। शीघ्र ही चलो! उन्हें अपने साथ ही ले आना। अब वे तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे। तुम्हारा बड़ा आदर करेंगे।' यद्यपि गरुड़ जानेमें डरते थे, फिर भी अपनी उड़नेकी शक्ति दिखलानेके लिये वे गये। भगवान्ने सत्यभामासे कहा कि 'सीताका रूप धारण करके आओ, हनुमान् आ रहा है।' चक्रसे कहा कि 'सावधानीसे पहरा दो, कोई भी द्वारिकामें प्रवेश न करने पावे।' सुदर्शनचक्र सावधानीसे पहरा देने लगा और सत्यभामा सज-धजकर अपने सौन्दर्यके गर्वमें मत्त होकर आ बैठीं। भगवान् श्रीकृष्ण धनुष-बाणधारी रामभद्र हो गये।

इस बार गरुड़की हिम्मत हनुमान्के पास जानेकी न पड़ी। उन्होंने दूरसे ही कहा कि भगवान् श्रीराम आपको शीघ्र ही बुला रहे हैं। यदि मेरे साथ ही आप चल सकें तो चलें, नहीं तो मेरे कंधोंपर बैठ जायँ, मैं लेता चलूँ।' हनुमान्ने बड़ी प्रसन्नतासे कहा—'अहोभाग्य! भगवान्ने मुझे बुलाया है। तुम चलो मैं आता ही हूँ'। गरुड़ने सोचा कि ये क्या कह रहे हैं। मुझसे पीछे चलकर ये कितनी देरमें पहुँचेंगे। परंतु वे डरे हुए थे, हनुमान्से फिर कुछ कहनेकी उनकी हिम्मत न पड़ी। वे चुपचाप चल पड़े। सोच रहे थे कि भगवान्के पास चलकर अपनी तीव्र गतिका प्रदर्शन करूँगा। हनुमान् गरुड़से बहुत पहले द्वारिकामें पहुँच गये। हनुमान्की दृष्टिमें वह द्वारिका नहीं थी, अयोध्या थी। फाटकपर चक्रने अकड़कर कहा कि 'मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा।' हनुमान्ने कहा—'तू भगवान्के दर्शनमें विघ्न करता है' और उसे पकड़कर मुँहमें डाल लिया। भगवान्के महलमें जाकर उन्होंने देखा कि भगवान् श्रीराम सिंहासनपर विराजमान हैं। उन्हें माता सीताके दर्शन न हुए। हनुमान्ने भगवान्के चरणोंमें साष्टांग प्रणाम करके पूछा—'महाराज! आज माताजी कहाँ हैं? उनके स्थानपर यह कौन बैठी हैं?

आपने किस दासीको इतना आदर दे रखा है?' सत्यभामा लज्जित हो गयीं। उनका सौन्दर्यमद नष्ट हो गया। भगवान्‌ने कहा—'हनुमान्! तुम्हें किसीने रोका नहीं? तुम यहाँ कैसे आ गये?' हनुमान्‌ने मुँहसे चक्र निकालकर सामने रख दिया। चक्र श्रीहत हो गया था। जब दौड़ते-हाँफते गरुड़ पहुँचे, तब उन्होंने देखा कि हनुमान् तो पहलेसे उपस्थित हैं। उनका मस्तक नत हो गया। इस प्रकार हनुमान्‌को निमित्त बनाकर भगवान्‌ने तीनोंका गर्व नष्ट किया और हनुमान्‌को द्वारिकाके पूर्वद्वारपर पुरीकी रक्षाके लिये नियुक्त किया।

× × × ×

उन दिनों पाण्डव काम्यकवनमें थे। एक दिन द्रौपदीके सामने हवामें उड़ता हुआ एक बड़ा ही सुन्दर और सुगन्धियुक्त पुष्प आया। द्रौपदीने भीमसे और फूलोंके लिये प्रार्थना की और वे जिस ओरसे फूल आया था, उस ओर चल पड़े। भीमको अपने बलका घमंड था और वे कोई काम करनेमें कभी कुछ सोचते-बिचारते नहीं थे। हनुमान्‌ने सोचा कि भीम मेरा ही भाई है। उसके मनमें गर्व नहीं होना चाहिये और इस समय वह जिधर बढ़ रहा है, उधर बड़ा खतरा है, कहीं नासमझीमें उसका अनिष्ट न हो जाय। हनुमान् आकर रास्तेमें लेट गये और अपना लंबा लंगूर फैला दिया। भीमने हनुमान्‌को पहचाना नहीं। उन्होंने कहा—'वानर! अपनी पूँछ हटा ले, नहीं तो मैं उसे तोड़ डालूँगा।' हनुमान्‌ने अपनेको पीड़ित-सा बना लिया और कहा—'भाई! मेरी पूँछ बहुत बड़ी है, तुम अभी जवान हो, बली हो, इसे लाँघकर चले जाओ या इसे हटा दो।' भीमने कहा—तुम्हारी पूँछ चाहे जितनी बड़ी हो, जैसे मेरे बड़े भाई हनुमान्‌ने समुद्र लाँघा था, वैसे ही मैं तुम्हारी पूँछ लाँघ जाता; परंतु सबके शरीरमें भगवान् रहते हैं, इसलिये किसीको लाँघना उचित नहीं है। मैं तुम्हारी पूँछ हटा देता हूँ।' उन्होंने पहले एक हाथ लगाया, परंतु पूँछ न हिली, दोनों हाथ लगाया, फिर भी वह जैसी-की-तैसी अटल रही। उनके शरीरमें पसीना आ गया। वे थक गये, परंतु पूँछको न हटा सके। अब भीमको

ध्यान आया। अभिमान टूटते ही वे हनुमान्‌को पहचान गये। उन्होंने अपने कृत्यपर पश्चात्ताप किया, क्षमा माँगी और हनुमान्‌ने बड़े प्रेमसे उन्हें गले लगाकर भगवान् रामकी कथा सुनायी। भीमसेनके बहुत आग्रह करनेपर हनुमान्‌ने अपना वह भीषणरूप दिखाया, जिससे उन्होंने समुद्र पार किया था। फिर छोटे रूपमें हो गये और भीमको अनेकों प्रकारके उपदेश दिये। उन्होंने कहा—'अब अभिमान कभी न करना। मेरे मिलनेका हाल किसीसे मत कहना और कोई आपत्ति पड़े तो मेरा स्मरण करना। कहो तो मैं हस्तिनापुर जाकर सारा नगर अभी नष्ट कर दूँ और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मार डालूँ। दुर्योधनको बाँध लाऊँ। जो कहो मैं करनेको तैयार हूँ।' भीमसेनने कहा—'आपकी सहायता पाकर हम सनाथ हुए, आपकी सहायतासे ही हम शत्रुओंको जीत सकेंगे।' हनुमान्‌ने कहा—'भीम! जब तुम शत्रुओंकी सेनामें घुसकर सिंहनाद करोगे तो अर्जुनकी ध्वजाके ऊपर रहकर मैं भी ऐसा शब्द करूँगा कि तुम्हारे शत्रु उसे सुनकर मृतप्राय हो जायँगे।' हनुमान्‌ने भीमको आलिंगन किया और वहाँसे अन्तर्धान हो गये। उनके बतलाये हुए मार्गसे जाकर भीमने वह पुष्प प्राप्त किया।

× × × ×

हनुमान्‌में अभिमानकी तनिक भी मात्रा नहीं है। हनुमान्‌के जीवनमें कभी अभिमान देखा ही न गया, इसीसे भगवान् अपने भक्तोंके अभिमानको दूर करनेका काम प्रायः हनुमान्‌से ही लेते हैं। कहते हैं कि अर्जुनको भी एक बार अपने बाणबलका अभिमान हो गया था। उन्होंने बात-ही-बातमें एक दिन श्रीकृष्णसे कहा कि 'तुमने रामावतारमें समुद्रपर पुल बाँधनेके लिये इतना आयोजन क्यों किया? बाणोंसे पुल बाँध देते। बेचारे वानरोंको झूठ-मूठ परेशान किया।' भगवान् हँसने लगे, उनका हँसना ही तो लोगोंको भुलावा देनेवाली माया है।

भगवान्‌ने कहा—अच्छा, तुम बाणोंसे समुद्रके एक छोटे-से अंशपर पुल बाँधो। मैं तुम्हें बताता हूँ।' अर्जुनने आनन-फाननमें वैसा कर दिया।

भगवान्ने हनुमान्का स्मरण किया, वे तुरंत आ पहुँचे। भगवान्की आज्ञासे वे बाणोंके पुलपर चढ़े। उनके चढ़ते ही पुल चरचराकर टूटने लगा, वे उसपरसे उतर आये। अर्जुनने देखा कि भगवान्की पीठपर खून लगा हुआ है। पूछनेपर मालूम हुआ कि यदि भगवान् अपनी पीठ लगाकर उस पुलको न रोक रखते तो वह हनुमान्को लिये-दिये धँस जाता और अर्जुनकी बड़ी हँसी होती। भगवान्ने कहा—'ऐसे-ऐसे अनेकों वानर थे, वे बाणके पुलपरसे कैसे जाते।' अर्जुनकी समझमें बात आ गयी। उनका गर्व भंग हो गया।

अर्जुनने भगवान्की आज्ञासे हनुमान्की बड़ी आराधना की। उनके मन्त्रोंके पुरश्चरण किये।* हनुमान्ने वर दिया कि 'मैं सदा तुम्हारी सहायता करूँगा और भावी युद्धमें मैं तुम्हारे रथपर बैठकर तुम्हारी रक्षा करूँगा।' कहते हैं कि भारत-युद्धमें अर्जुनके बाणोंसे सबके रथ बहुत दूर-दूर जा गिरते थे, परंतु किसीके बाणोंसे अर्जुनका रथ पीछे नहीं हटता था। एक बार कर्णके बाणसे अर्जुनका रथ कुछ थोड़ा-सा पीछे हट गया, इसपर युद्धभूमिमें ही भगवान् श्रीकृष्णने कर्णकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। अर्जुनने पूछा—'भगवन्! मेरे बाणसे कर्णका रथ बहुत पीछे हट जाता है और उसके बाणसे मेरा रथ बहुत थोड़ा-सा पीछे हटा है, फिर उसकी प्रशंसा करनेकी क्या बात है?' भगवान्ने

---

* उक्त मन्त्र यह है—'हनुमते रुद्रात्मकाय हुँ फट्।' नदी तीरपर, विष्णुमन्दिरमें या निर्जन अथवा किसी पर्वतपर एकाग्रचित्तसे श्रीहनुमान्जीका ध्यान करते हुए एक लाख मन्त्रोंका जप करना चाहिये। ध्यान यह है—

महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तं रावणं प्रति। तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट घोररावं समुत्सृजन्॥
लाक्षारसारुणं रौद्रं कालान्तकयमोपमम्। ज्वलदग्निलसन्नेत्रं सूर्यकोटिसमप्रभम्॥
अंगदाद्यैर्महावीरैर्वेष्टितं रुद्र रूपिणम्। एवंरूपं हनूमन्तं ध्यात्वा यः प्रजपेन्मनुम्॥

हनुमान्जी एक पर्वतको उखाड़कर रावणकी ओर दौड़ रहे हैं और भीषण हुंकार करते हुए रावणको पुकारकर कह रहे हैं—'रे दुष्ट! ठहर, ठहर! उनका लाखके रसके समान लाल वर्ण है—और वे कालान्तक यमके सदृश हैं, उनके दोनों नेत्र अग्निके सदृश जाज्वल्यमान हैं, करोड़ों सूर्योंके समान उनका तेज है, वे रुद्ररूपी हनुमान् अंगदादि महान् वीरोंसे घिरे हैं।

कहा—अर्जुन! तुम्हारे रथपर हनुमान् बैठे हुए हैं, नहीं तो अबतक तुम्हारा रथ भस्म हो गया होता। उनके बैठे रहनेपर भी रथका पीछे हट जाना कर्णकी बहुत बड़ी वीरताका सूचक है।' अर्जुनका समाधान हो गया! महायुद्धके अन्तमें जब हनुमान् अर्जुनके रथपरसे कूद पड़े, तब उनका रथ जलकर राख हो गया। यह हनुमान्‌का ही प्रताप था कि अर्जुन इतनी वीरताके साथ लड़ सके।

× × × ×

श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्न दिग्विजयके लिये निकले हुए थे। द्वारिकामें अश्वमेध-यज्ञ होनेवाला था और उसीकी यह भूमिका थी। वे दिग्विजय करते हुए हिरण्मयखण्डमें पहुँचे। उस समय उनके साथ अर्जुन भी थे और उनके रथकी ध्वजापर हनुमान् विराजमान थे। हिरण्मयखण्डमें नल-नीलके वंशजोंसे प्रद्युम्नका बड़ा युद्ध हुआ। अर्जुन भी लड़ रहे थे। वहाँके वीर वानर अर्जुन और प्रद्युम्नके रथको अपनी पूँछमें लपेटकर जमीनपर पटक देते। बड़ा भयंकर संग्राम हुआ, अन्तमें हनुमान्‌जी ध्वजापरसे कूद पड़े और अपनी पूँछमें सब वानरोंको समेट लिया। जब उन्हें मालूम हुआ कि ये तो हनुमान् हैं, तब वहाँके सब निवासियोंने बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे हनुमान्, प्रद्युम्न और अर्जुनकी पूजा की। अनेकों प्रकारके पदार्थ भेंट दिये। वहाँसे फिर उन लोगोंने दूसरी ओर प्रस्थान किया।

हनुमान् कितने बड़े तत्त्ववेत्ता थे; इसका पता रामरहस्य-उपनिषद्‌से चलता है। सनक, सनन्दन, सनत्कुमार तथा सनातन चारों भाई उनसे राम-मन्त्रोंका रहस्य प्राप्त करते हैं। बड़े-बड़े ऋषि और प्रह्लाद उनके शिष्य हैं। स्वयं भगवान् रामने उन्हें उपनिषदोंका तत्त्व बतलाया है, जिनका वर्णन मुक्तिकोपनिषद्‌में आया है और भी पुराणान्तरोंमें मारुति-चरित्र विस्तारपूर्वक वर्णित हुआ है। यहाँ तो उनके जीवनकी कुछ ही घटनाएँ संक्षेपमें लिखी जा सकी हैं।

भगवान् मारुति कहीं गये नहीं हैं। यहीं हैं, आज भी हमारे बीचमें ही हैं। केवल हम उनको पहचानते नहीं। इसका कारण हमारी अश्रद्धा

और अभक्ति ही है। तुलसीदास आदि महात्माओंने इसी युगमें मारुतिके साक्षात्कार किये हैं। अब भी ऐसे साधक हैं, जो भगवान् मारुतिको प्राप्त करते हैं। शास्त्रोंमें उन्हें पानेके अनेकों मन्त्र और अनुष्ठान भी हैं। श्रद्धापूर्वक उनका अनुष्ठान करनेसे मारुतिरायके दर्शन हो सकते हैं। उनके स्मरणसे अन्तःकरण शुद्ध होता है और उनकी कृपासे भगवत्प्राप्ति होती है।

श्रीमारुतिप्रसन्न

□□

॥ श्रीहनूमते नमः ॥

श्रीहनुमानचालीसा

दोहा

श्रीगुरु चरन सरोज रज
निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु
जो दायकु फल चारि॥
बुद्धिहीन तनु जानिके,
सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुधि बिद्या देहु मोहिं,
हरहु कलेस बिकार॥

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर। जय कपीस तिहुँ लोक उजागर॥
राम दूत अतुलित बल धामा। अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा॥
महाबीर बिक्रम बजरंगी। कुमति निवार सुमति के संगी॥
कंचन बरन बिराज सुबेसा। कानन कुंडल कुंचित केसा॥
हाथ बज्र और ध्वजा बिराजै। काँधे मूँज जनेऊ साजै॥
संकर सुवन केसरीनंदन। तेज प्रताप महा जग बंदन॥
बिद्यावान गुनी अति चातुर। राम काज करिबे को आतुर॥
प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया। राम लषन सीता मन बसिया॥
सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा। बिकट रूप धरि लंक जरावा॥

भीम रूप धरि असुर सँहारे। रामचंद्र के काज सँवारे॥
लाय सजीवन लखन जियाये। श्रीरघुबीर हरषि उर लाये॥
रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई। तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई॥
सहस बदन तुम्हरो जस गावैं। अस कहि श्रीपति कंठ लगावैं॥
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा। नारद सारद सहित अहीसा॥
जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते। कबि कोबिद कहि सके कहाँ ते॥
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा। राम मिलाय राज पद दीन्हा॥
तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना। लंकेस्वर भए सब जग जाना॥
जुग सहस्त्र जोजन पर भानू। लील्यो ताहि मधुर फल जानू॥
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं। जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं॥
दुर्गम काज जगत के जेते। सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते॥
राम दुआरे तुम रखवारे। होत न आज्ञा बिनु पैसारे॥
सब सुख लहै तुम्हारी सरना। तुम रच्छक काहू को डर ना॥
आपन तेज सम्हारो आपै। तीनों लोक हाँक तें काँपै॥
भूत पिसाच निकट नहिं आवै। महाबीर जब नाम सुनावै॥
नासै रोग हरै सब पीरा। जपत निरंतर हनुमत बीरा॥
संकट तें हनुमान छुड़ावै। मन क्रम बचन ध्यान जो लावै॥
सब पर राम तपस्वी राजा। तिन के काज सकल तुम साजा॥
और मनोरथ जो कोइ लावै। सोइ अमित जीवन फल पावै॥
चारों जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा॥
साधु संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे॥
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता। अस बर दीन जानकी माता॥
राम रसायन तुम्हरे पासा। सदा रहो रघुपति के दासा॥

तुम्हरे भजन राम को पावै। जनम जनम के दुख बिसरावै॥
अंत काल रघुबर पुर जाई। जहाँ जन्म हरि-भक्त कहाई॥
और देवता चित्त न धरई। हनुमत सेइ सर्ब सुख करई॥
संकट कटै मिटै सब पीरा। जो सुमिरै हनुमत बलबीरा॥
जै जै जै हनुमान गोसाईं। कृपा करहु गुरु देव की नाईं॥
जो सत बार पाठ कर कोई। छूटहि बंदि महा सुख होई॥
जो यह पढ़ै हनुमान चलीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा॥
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा॥

दोहा

पवनतनय संकट हरन,
मंगल मूरति रूप।
राम लषन सीता सहित,
हृदय बसहु सुर भूप॥

॥ इति॥

□□

संकटमोचन हनुमानाष्टक

मत्तगयन्द छन्द

बाल समय रबि भक्षि लियो तब तीनहुँ लोक भयो अँधियारो।
ताहि सों त्रास भयो जग को यह संकट काहु सों जात न टारो॥
देवन आनि करी बिनती तब छाँड़ि दियो रबि कष्ट निवारो।
को नहिं जानत है जगमें कपि संकटमोचन नाम तिहारो॥ १ ॥

बालि की त्रास कपीस बसै गिरि जात महाप्रभु पंथ निहारो।
चौंकि महा मुनि साप दियो तब चाहिय कौन बिचार बिचारो॥
कै द्विज रूप लिवाय महाप्रभु सो तुम दास के सोक निवारो॥ को०-२ ॥

अंगद के सँग लेन गये सिय खोज कपीस यह बैन उचारो।
जीवत ना बचिहौ हम सो जु बिना सुधि लाए इहाँ पगु धारो॥
हेरि थके तट सिंधु सबै तब लाय सिया-सुधि प्रान उबारो॥ को०-३ ॥

रावन त्रास दई सिय को सब राक्षसि सों कहि सोक निवारो।
ताहि समय हनुमान महाप्रभु जाय महा रजनीचर मारो॥
चाहत सीय असोक सों आगि सु दै प्रभु मुद्रिका सोक निवारो॥ को०-४ ॥

बान लग्यो उर लछिमन के तब प्रान तजे सुत रावन मारो।
लै गृह बैद्य सुषेन समेत तबै गिरि द्रोन सु बीर उपारो॥
आनि सजीवन हाथ दई तब लछिमन के तुम प्रान उबारो॥ को०-५ ॥

रावन जुद्ध अजान कियो तब नाग कि फाँस सबै सिर डारो।
श्रीरघुनाथ समेत सबै दल मोह भयो यह संकट भारो॥
आनि खगेस तबै हनुमान जु बंधन काटि सुत्रास निवारो॥ को०-६ ॥

बंधु समेत जबै अहिरावन लै रघुनाथ पताल सिधारो।
देबिहिं पूजि भली बिधि सों बलि देउ सबै मिलि मंत्र बिचारो॥
जाय सहाय भयो तब ही अहिरावन सैन्य समेत सँहारो॥ को०-७॥

काज किये बड़ देवन के तुम बीर महाप्रभु देखि बिचारो।
कौन सो संकट मोर गरीब को जो तुमसों नहिं जात है टारो॥
बेगि हरो हनुमान महाप्रभु जो कछु संकट होय हमारो॥ को०-८॥

दोहा—लाल देह लाली लसे, अरु धरि लाल लँगूर।
बज्र देह दानव दलन, जय जय जय कपि सूर॥

॥ इति संकटमोचन हनुमानाष्टक सम्पूर्ण॥

❑ ❑

श्रीहनुमत्-स्तवन

सो०—प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यानघन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर॥

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि॥

गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम्।
रामायणमहामालारत्नं वन्देऽनिलात्मजम्॥

अंजनानन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम्।
कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लंकाभयंकरम्॥

उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं
यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः।
आदाय तेनैव ददाह लंकां
नमामि तं प्रांजलिरांजनेयम्॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥

आंजनेयमतिपाटलाननं कांचनाद्रिकमनीयविग्रहम्।
पारिजाततरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम्॥

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिम्।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्॥

❑❑

श्रीहनुमान्‌जीकी आरती

आरती कीजै हनुमान लला की । दुष्टदलन रघुनाथ कला की ॥ टेक ॥
जाके बल से गिरिवर काँपै । रोग-दोष जाके निकट न झाँपै ॥ १ ॥
अंजनि पुत्र महा बलदाई । संतन के प्रभु सदा सहाई ॥ २ ॥
दे बीरा रघुनाथ पठाये । लंका जारि सीय सुधि लाये ॥ ३ ॥
लंका सो कोट समुद्र सी खाई । जात पवनसुत बार न लाई ॥ ४ ॥
लंका जारि असुर संहारे । सियारामजीके काज सँवारे ॥ ५ ॥
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे । आनि सजीवन प्रान उबारे ॥ ६ ॥
पैठि पताल तोरि जम-कारे । अहिरावन की भुजा उखारे ॥ ७ ॥
बायें भुजा असुर दल मारे । दहिने भुजा संतजन तारे ॥ ८ ॥
सुर नर मुनि आरती उतारे । जै जै जै हनुमान उचारे ॥ ९ ॥
कंचन थार कपूर लौ छाई । आरति करत अंजना माई ॥ १० ॥
जो हनुमान (जी) की आरति गावै । बसि बैकुंठ परमपद पावै ॥ ११ ॥

❑ ❑

॥ श्रीहरि: ॥

परम श्रद्धेय श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार (भाईजी)-के अनमोल प्रकाशन

कोड	पुस्तक	कोड	पुस्तक
820	भगवच्चर्चा (ग्रन्थाकार)	355	महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर
050	पदरत्नाकर	356	शान्ति कैसे मिले?
049	श्रीराधा-माधव-चिन्तन	357	दुःख क्यों होते हैं ?
058	अमृत-कण	348	नैवेद्य
332	ईश्वरकी सत्ता और महत्ता	337	दाम्पत्य-जीवनका आदर्श
333	सुख-शान्तिका मार्ग	336	नारीशिक्षा
343	मधुर	340	श्रीरामचिन्तन
056	मानव-जीवनका लक्ष्य	338	श्रीभगवन्नाम-चिन्तन
331	सुखी बननेके उपाय	345	भवरोगकी रामबाण दवा
334	व्यवहार और परमार्थ	346	सुखी बनो
514	दुःखमें भगवत्कृपा	341	प्रेमदर्शन
386	सत्संग-सुधा	358	कल्याण-कुंज
342	संतवाणी—ढाई हजार अनमोल बोल	359	भगवान्‌की पूजाके पुष्प
347	तुलसीदल	360	भगवान् सदा तुम्हारे साथ हैं
339	सत्संगके बिखरे मोती	361	मानव-कल्याणके साधन
349	भगवत्प्राप्ति एवं हिन्दू-संस्कृति	362	दिव्य सुखकी सरिता
350	साधकोंका सहारा	363	सफलताके शिखरकी सीढ़ियाँ
351	भगवच्चर्चा	364	परमार्थकी मन्दाकिनी
352	पूर्ण समर्पण	366	मानव-धर्म
353	लोक-परलोक-सुधार	526	महाभाव-कल्लोलिनी
354	आनन्दका स्वरूप	367	दैनिक कल्याण-सूत्र
		369	गोपीप्रेम

कोड	पुस्तक	कोड	पुस्तक
368	प्रार्थना—प्रार्थना-पीयूष	381	दीन-दुःखियोंके प्रति कर्तव्य
370	श्रीभगवन्नाम	379	गोवध भारतका कलंक एवं गायका माहात्म्य
373	कल्याणकारी आचरण	382	सिनेमा मनोरंजन या विनाशका साधन
374	साधन-पथ—सचित्र	344	उपनिषदोंके चौदह रत्न
375	वर्तमान शिक्षा	371	राधा-माधव-रससुधा-(षोडशगीत) सटीक
376	स्त्री-धर्म-प्रश्नोत्तरी	384	विवाहमें दहेज—
377	मनको वश करनेके कुछ उपाय	809	दिव्य संदेश...........
378	आनन्दकी लहरें		
380	ब्रह्मचर्य		

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित कुछ साधन-भजनकी पुस्तकें

052	स्तोत्ररत्नावली—सानुवाद	1214	मानस-स्तुति-संग्रह
819	श्रीविष्णुसहस्रनाम—शांकरभाष्य	1344	सचित्र-आरती-संग्रह
207	रामस्तवराज—(सटीक)	1591	आरती-संग्रह—मोटा टाइप
211	आदित्यहृदयस्तोत्रम्	208	सीतारामभजन
224	श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र	221	हरेरामभजन—दो माला (गुटका)
231	रामरक्षास्तोत्रम्	225	गजेन्द्रमोक्ष
1594	सहस्रनामस्तोत्रसंग्रह	1505	भीष्मस्तवराज
715	महामन्त्रराजस्तोत्रम्	699	गंगालहरी
054	भजन-संग्रह	1094	हनुमानचालीसा—भावार्थसहित
140	श्रीरामकृष्णलीला-भजनावली	228	शिवचालीसा
142	चेतावनी-पद-संग्रह	232	श्रीरामगीता
144	भजनामृत—६७ भजनोंका संग्रह	851	दुर्गाचालीसा
1355	सचित्र-स्तुति-संग्रह	236	साधकदैनन्दिनी